पपौरा

[नवीन शिक्षा-आयोजन]

सम्पादक—

राजकुमार जैन साहित्याचार्य

भूमिका-लेखक—

पं० बनारसीदास चतुर्वेदी

मूल्य ।=)

स्मृति में

आज से ठीक दो वर्ष पूर्व श्रावण मास में सवाई सिंघई श्री धन्यकुमार जी जैन (कटनी) के अनुज सवाई सिंघई श्री कोमलचन्द्र जैन का सोलह वर्ष की अल्पायु में स्वर्गवास हो गया था। हमें हार्दिक दुःख है कि एक होनहार तरुण असमय में ही हमारे बीच से उठ गया। दिवंगत बन्धु की स्मृति को चिरस्थायी बनाने के लिए इस पुस्तकमाला का श्रीगणेश किया गया है। अहार-क्षेत्र से सम्बन्धित पुस्तक भी इसी के अन्तर्गत प्रकाशित हुई थी।

—राजकुमार जैन

१२ जोलाई १९५४

पाठकों से निवेदन

हमारे एक मित्र तथा प्रेस की लापरवाही के कारण पुस्तक में अनेकों अशुद्धियाँ रह गई हैं। कहीं-कहीं पर पृष्ठ-संख्या कुछ-का-कुछ पड़ गई है और वह लेख-सूची तो इतनी गलत छपी थी कि उसे पुनः छपवाना पड़ा है। पुस्तक के प्रकाशन में असाधारण विलम्ब भी उन्हीं मित्र और प्रेस के कारण हुआ है। पाठकों से हम क्षमा प्रार्थी हैं।

—सम्पादक

लेख-सूची

दो शब्द

पपौरा-विद्यालय की संचालक-कमेटी ने कुछ दिन पूर्व वहां के वीर-विद्यालय को एक विद्यामन्दिर के रूप मे परिणत करने की आयोजना जैन-समाचार-पत्रो में प्रकाशित की थी। प्रस्तुत पुस्तक उस आयोजना के सम्बन्ध मे प्राप्त लेखों का संग्रह है। पपौरा क्षेत्र के प्रतिमा-लेख भी इसमे दे दिये गये हैं, जिससे क्षेत्र का पुरातत्व-सामग्री से पाठक परिचित हो सकें।

विद्या-मन्दिर-आयोजन—

प्रस्तुत आयोजन को प्रकाशित करके इसे समाज के सामने रखने में कमेटी का एक लक्ष्य था, जिसे उसने अपने शब्दो मे इस प्रकार प्रकट किया था :—

"जैन-समाज में शिक्षा-संस्थाओं की कमी नही है, लेकिन उनमें से लगभग सभी एकांगी हैं। शिक्षा का व्यापक ध्येय उनके सामने नहीं है, न आसपास की जनता से ही उनका कोई सम्बन्ध है। वर्तमान समय की आवश्यकताओं को देखते हुए ऐसी संस्था की आवश्यकता अनुभव होती है, जिसमें विद्यार्थियों को सुसंस्कृत वातावरण में रख कर उनके चरित्र का सर्वाङ्गीण विकास किया जाय तथा सांस्कृतिक एवं साहित्यिक शिक्षा के साथ-साथ उन्हें सफल नागरिक भी बनाया जाय।"

प्रस्तुत आयोजन को प्रकाश में लाने के मूल में कमेटी का न केवल यही लक्ष्य था, बल्कि एक अनुभव-मूलक प्रेरणा और सामाजिक क्षेत्र में आदर्श विद्यार्थी-समुदाय को उपस्थित करने की सम्भावना भी थी। यहां कहना है कि जब से यह आयोजन

प्रकाश में आया है तब से अब तक जैन-पत्रों में बराबर इसके सम्बन्ध में कुछ न कुछ चर्चा चलती रही है। इतना ही नहीं, श्री व्योहार राजेन्द्रसिंह जी एम० एल० ए० श्री जैनेन्द्रकुमार जी, बा० वृन्दावनलाल जी वर्मा जैसे सुप्रसिद्ध राष्ट्रीय कार्यकर्ताओं तथा साहित्यकारों का ध्यान भी इस आयोजन की उपयोगिता की ओर आकृष्ट हुआ है। राय बहादुर सेठ हीरालाल जी तथा सेठ गेंदालाल जी सूरजमल जी बड़जात्या, इन्दौर जैसे श्रीमानों की उल्लेखनीय आर्थिक सहायताओं से इसे प्रयोग में लाने का प्रयत्न भी कुछ अंशों में हल हुआ है।

आयोजन के मूल में—

आयोजन जिस लक्ष्य को लेकर उठाया गया है, यद्यपि कमेटी उसे संक्षेप में स्पष्ट कर चुकी है, तथापि उसका लक्ष्य यहीं तक सीमित नहीं। उसमें व्यक्ति के निर्माण की भावना के साथ प्रान्त के पुनर्निर्माण की भावना भी सन्निहित है।

बुन्देलखण्ड-प्रान्त की वर्तमान दुर्दशा किसी से छिपी नहीं है। उसमें भी रियायती प्रदेश में रहने वाली जनता की स्थिति और भी खराब है। इस प्रदेश तथा इसमें रहने वाली जनता को ऊपर उठाने की अत्यन्त आवश्यकता है। विद्या-मन्दिर का लक्ष्य नगरों के कुछेक विद्यार्थियों को शिक्षित कर देना ही नहीं है, बल्कि प्रांत के हर एक गांव के एक-दो बालकों को सुशिक्षित और सुसंस्कृत नागरिक बनाना है।

एक महान अनुष्ठान—

प्रस्तुत आयोजन को सफल बनाना साधारण कार्य नहीं है। यह एक महान अनुष्ठान है और इसे वे ही सफल कर सकते हैं,

जिनमें जन-सेवा करने की धुन हो और जो अपना सारा समय और शक्ति इस महत्वपूर्ण उद्देश्य की पूर्ति के लिये लगा सकते हों। जो केवल पद और सम्मान के भूखे हैं उनके वश का यह काम नहीं है और न उन्हें भूल कर भी इस ओर अग्रसर होना चाहिये। पद-लोभी तथा सम्मान-लोलुप अधिकारियों को सैकड़ों विद्यार्थियों के जीवन को नष्ट कर देने का कोई अधिकार नहीं है, आज यदि वर्तमान जैन-शिक्षा-संस्थाओं से सफल नागरिक नहीं निकल रहे हैं तो इसका एकमात्र कारण है उनमें—

योग्य कार्यकर्ताओं का अभाव—

जैन-समाज में शिक्षा-संस्थाएँ जितनी हैं उनमें एक भी संस्था इस प्रकार की नहीं है, जिसका संचालक या अधिष्ठाता अपना सारा समय उस संस्था की सेवा के लिये देता हो और संस्था की और उसमें रहने वाले विद्यार्थियों के हित की चिन्ता करता हो।

शिक्षा का क्षेत्र महान तथा दायित्वपूर्ण है और यह समाज, उसके बालकों तथा राष्ट्र के लिये दुर्भाग्य की वस्तु है कि किसी भी संस्था का सर्वोच्च अधिकारी शिक्षा-विशेषज्ञ न हो और उसके समय का अधिकांश संस्था की ही चिन्ता के स्थान पर अन्यान्य जीविका-साधन की प्रवृत्तियों में व्यतीत होता हो। हमारा मत है कि शिक्षा-संस्थाओं के संचालन का काम सुयोग्य शिक्षा-विशेषज्ञों के हाथ में रहना चाहिये। इसलिये हम चाहते हैं कि प्रस्तुत विद्या-मन्दिर का संचालक कोई अनुभवी शिक्षा-विशेषज्ञ ही होना चाहिये, जो अपना सारा समय संस्था की हित-साधना में अर्पित कर सके। संस्था और विद्यार्थियों की हित-साधना ही उसका जीवन-श्वांस हो। वह छात्रों के

वर्तमान जीवन-निर्माण पर भी ध्यान रक्खें तथा इस सम्बन्ध में पूर्ण सतर्क रहें कि उनका भावी जीवन आजकल के नव-युवकों की तरह अन्धकारमय न हो।

पपौरा का आह्वान्-'ज्ञान-रथ चलाओ-

प्रस्तुत आयोजन को सफल बनाना एक महान पुण्य-कार्य है। इस दीन-हीन प्रान्त के सहस्रों बालकों को सुशिक्षित और सुसंस्कृत करने का यह एक बड़ा उपयोगी अवसर है। पपौरा अपने पचहत्तर मन्दिरों के उत्तुङ्ग शिखर रूपी हाथों को उठा कर समाज के श्रीमानों का और विशेषतः बुन्देलखण्ड के श्रीमानों का आह्वान कर रहा है-'आओ, धर्मप्राण श्रीमानों, आओ। अतीत काल में गजरथ चला कर तुमने खूब यश और पुण्य लूटा। अब समय ज्ञान-रथ चलाने का है। ज्ञान-रथ चलाओ और परम्परागत प्रतिष्ठा मे कलंक न आने दो।"

विद्वानों के उपयोगी सुझाव=

विद्या-मन्दिर के आयोजन की रूपरेखा निर्धारित करने तथा उसे सफल बनाने की दृष्टि से विद्वान लेखकों ने अनेक सुझाव अपने लेखों में दिये हैं। श्री व्योहार राजेन्द्रसिंह जी एन० एल० ए०, बा० वृन्दावनलालजी वर्मा, श्री पं० कैलाशचंद्रजी सिद्धान्तशास्त्री और पं० महेन्द्रकुमार जी ने जैन-शिक्षा-संस्था के आदर्श के बारे में जो बातें बताई हैं, वे बड़े ही महत्व की हैं और उन्हें प्रयोग में लाकर कोई भी शिक्षा-संस्था आदर्श बन सकती है। श्रद्धेय बाबू अजितप्रसाद जी ने बहुत संक्षेप में अपने अनुभव का निचोड़ उपस्थित कर दिया है और बन्धुवर पं० परमेष्ठीदास जी की यह सम्भावना कि "क्या पपौरा दयाल-

बाग नहीं बन सकता ?" कितनी आशा-प्रद है और पपौरा के कितने स्वर्णिम भविष्य की ओर निर्देश कर रही है।

सुझावों का उपयोग-

विद्यालय के अधिकारियों को चाहिये कि वे इन सुझावों का उपयोग करने के लिये यत्नशील हों। निःसन्देह समस्त सुझाव एक साथ उपयोग में नहीं लाये जा सकते, लेकिन कुछ का प्रयोग तो तत्काल ही कर डालना चाहिये। हमारी सम्मति में निम्नलिखित सुझावों का प्रयोग इस वर्ष के प्रारम्भ से ही किया जा सकता है:—

१-जैसी कि स. सिं. श्री धन्यकुमारजी की भावना है, वर्षा होते ही आम, पपीता और अमरूद के वृक्षों के तीन विशाल उद्यानों का बीजारोपण हो जाना चाहिये। विद्यालय के सामने ही अहाते में कुछ वृक्ष और छोटी-सी पुष्पवाटिका लगाई जाय। हम श्री राजकृष्ण जी देहली की इस सम्मति से भी सहमत हैं कि पपौरा कोट के अन्दर किनारे-किनारे सर्वत्र नीबू के वृक्ष लगाये जांय, जो आगे चल कर फल भी देंगे और क्षेत्र की शोभा भी बढ़ायेंगे। साथ ही क्षेत्र की सुरक्षा के लिये बाड़ी का भी काम देंगे। भविष्य में बड़े-बड़े वृक्षों के नीचे चबूतरे बना कर अध्यापन-कार्य के लिये उनका बहुत सुन्दर उपयोग हो सकेगा। पांच-सात वर्ष के भीतर क्षेत्र की प्राकृतिक सुषमा एकदम निखर उठेगी।

२-जैसा कि आदरणीय पं० जगन्मोहनलाल जी शास्त्री का सुझाव है, पपौरा विद्यालय में प्राइमरी शिक्षण भी अवश्य प्रारम्भ कर देना चाहिये। हमें मालूम है कि इस समय विद्यालय

की आर्थिक स्थिति इतनी अच्छी नहीं है कि अधिकारी महानुभाव इस वर्ष से ही प्राइमरी शिक्षण की पूरी-पूरी व्यवस्था कर सकें, लेकिन एक बात है, जिसकी ओर उन्हें अवश्य ही लक्ष्य रखना चाहिये, वह यह कि आसपास के गांव में जिन बालकों को प्राइमरी शिक्षा देनी जरूरी हो, उनकी संख्या वे मालूम करलें। यह बात इसलिये कही जा रही है कि इसके आधार पर आगे चल कर विद्यालय के आर्थिक प्रश्न को सरल करने के लिये श्रीमानों का ध्यान आकर्षित किया जा सकेगा। उन्हें यह बतलाया जा सकेगा कि प्रान्त के कितने अबोध बालक शिक्षा के लिये तरस रहे हैं। कुछ ग्रामीण बालकों की शिक्षा का प्रबन्ध तो तुरन्त ही कर देना चाहिये।

१-श्रीमान् रायबहादुर सेठ हीरालाल जी तथा श्रीमान् सेठ गेंदालाल सूरजमल जी इन्दौर की ओर से औद्योगिक शिक्षा के लिये १५०) मासिक सहायता स्वीकृत है। इसका उपयोग इस वर्ष से शुरू कर देना चाहिये। हम औद्योगिक शिक्षण के पक्षपाती हैं, पर हमें यह पसन्द नहीं है कि एक विद्यार्थी को समस्त विषयों के शिक्षण की ओर घसीटा जाय, जैसा कि आज के अधिकांश विद्यालयों में होता है। जिन विद्यार्थियों को औद्योगिक शिक्षा की ओर प्रवृत्त किया जाय, उन्हें अन्य कोई शिक्षण अनिवार्य रूप से नहीं दिया जाना चाहिये। हमारी राय में १५०) मासिक की सहायता से एक आयुर्वेदिक फार्मेसी संचालित होनी चाहिये। एक अनुभवी वैद्य बुला लिया जाय, जो विद्यार्थियों को आयुर्वेद की शिक्षा दे तथा रसायन-शाला में अपने तत्वावधान में छात्रों से औषधियों का निर्माण करावे। औषधियां अधिक मात्रा में तैयार कराई जांय और जैन-औषधालयों

तथा बाजार में बिक्री के लिये भी भेजी जांय। इस तरह व्यावहारिक औद्योगिक शिक्षा की व्यवस्था भी हो सकेगी तथा विद्यालय को आर्थिक लाभ भी। जब एक औद्योगिक शिक्षा सफलता के साथ संचालित हो सके तभी दूसरे औद्योगिक शिक्षण को प्रयोग में लाया जाय। प्रारम्भ में एक साथ अनेक प्रकार के औद्योगिक शिक्षण में सफलता प्राप्त नहीं हो सकेगी।

४—एक अंग्रेजी जानकार भी विद्यालय में बुला लेना चाहिये, जो कम-से-कम पांचवीं-छठवीं कक्षा तक अंग्रेजी तथा गणित आदि पढ़ा सके। इसके पश्चात् शिक्षा की प्रगति के अनुसार हाईस्कूल के शिक्षण के लिये भी अध्यापकों की व्यवस्था होती रहेगी।

तात्कालिक आवश्यकताएँ—

पपौरा विद्यालय की इन दो आवश्यकताओं की पूर्ति समाज के धनी-मानी सज्जनों को तुरन्त ही कर देनी चाहिये:—

१—विद्यालय की मुख्य आवश्यकता स्थायी कोष की है। वर्तमान कोष एक-दो हजार से अधिक का नहीं है। यद्यपि हम बहुत बड़े स्थायी कोष को जमा करने के पक्ष में नहीं हैं, लेकिन आवश्यक स्थायी कोष तो होना ही चाहिये। स्थायी कोष के अभाव में न तो अच्छी संख्या में विद्यार्थी प्रविष्ट किये जा सकते हैं और न उन्हें उपयोगी शिक्षा देने के लिये पर्याप्त साधन-सामग्री ही जुटाई जा सकती है।

२—दूसरी आवश्यकता है छात्रावास के निर्माण की। पपौरा में विद्यार्थियों के रहने के लिये इस प्रकार का कोई स्थान

नहीं है, जहां सुविधा के साथ तीस-चालीस विद्यार्थी भी ठहराए जा सकते हों। एक ऐसे छात्रावास का निर्माण तो होना ही चाहिये, जिसमें कम-से-कम सौ-डेढ़सौ विद्यार्थी रह सकें। आशा है, समाज के श्रीमान् इस ओर यथेष्ट ध्यान देने की कृपा करेंगे।

कृतज्ञता-प्रकाश—

श्रद्धेय दानवीर साहु शान्ति प्रसाद जी को मैं हार्दिक धन्यवाद देता हूँ, क्योंकि उनकी कृपापूर्ण सहायता के कारण मुझे इतना अवकाश मिल सका, जिसमें इस पुस्तक की सामग्री इकट्ठी की जा सकी। श्रीमान् रायबहादुर सेठ हीरालाल जी तथा श्रीमान् सेठ गेंदालाल सूरजमल जी ने औद्योगिक शिक्षण के लिये १५०) मासिक सहायता देना स्वीकार किया है। उसके लिये आभारी हूं। आदरणीय सवाई सिंघई श्रीधन्यकुमार जी ने इस पुस्तक के प्रकाशन का व्यय दिया है और एक सुन्दर लेख भी भेजा है। उनसे अब हम लोगों का इतना निकट सम्बन्ध है कि उनके विषय में कुछ कहते हुए भी संकोच होता है। फिर भी इतना तो कहना ही होगा कि वे हमारी जाति के ही नहीं, देश के भी उन अल्प-संख्यक साधन-सम्पन्न नवयुवकों में हैं, जिनमें दानशीलता के साथ विवेक भी है और दूरदर्शिता के साथ व्यवहार-बुद्धि भी।

बन्धुवर यशपाल जी तो घर के ही हैं और अभी हम लोगों को बहुत वर्षों तक साथ-साथ काम करना है।

टीकमगढ़-निवासी श्री खुशीलाल जी जैन भी हमारे धन्यवाद के पात्र हैं जो पपौरा की वर्तमान व्यवस्था को इतने सुचारु रूप से चला रहे हैं।

'मधुकर'-सम्पादक श्री बनारसीदास चतुर्वेदी की प्रेरणा और परामर्श हमें बराबर मिलते रहे हैं और भविष्य में भी मिलने की पूर्ण आशा है। कोरमकोर शब्दों में कृतज्ञता प्रकट करके हम उनके कार्य का महत्व घटाना नहीं चाहते। आवश्यकता इस बात की है कि जैन-समाज उनके सत्परामर्शों से लाभ उठावे। ऐसे अवसर पर जब कि यह पुस्तक छप कर आ रही है, मैं अपने जनपद (बुन्देलखण्ड प्रान्त) से दूर जा पड़ा हूं, पर मेरा हृदय वहीं पर है। जिस संस्था के अन्न-जल से मैं पालित-पोषित हुआ हूँ, उसकी यदि कुछ भी सेवा मुझ से बन पड़ी तो मैं अपना परम सौभाग्य समझूंगा। उसके ऋण से तो उऋण हो नहीं सकता।

जैन ज्ञानपीठ,
काशी। —राजकुमार जैन

[श्री वीर दिगम्बर जैन विद्यालय पपौरा जी का प्राचीन भवन और छात्रावास]

पपौरा क्षेत्र

(क्या है और क्या बन सकता है)

उषा काल था। पपौरा के निकट का रमन्ना (रक्षित अरण्य) हमारे यहां से चार मील दूर है। हम तीन आदमी–श्रीयुत यशपाल जैन बी० ए० एल·एल० बी०, पं० राजकुमारजी साहित्याचार्य और मैं—कुण्डेश्वर से उक्त वन की ओर रवाना हुए और प्रातःकाल की शीतल मन्द समीर का आनन्द लेते हुए डेढ़ घण्टे में वन के निकट जा पहुँचे। इस वन का क्षेत्रफल आठ वर्ग मील है और कहीं-कहीं पर यह काफी घना हो गया है। स्वर्ण-मृग (चीतल), सांभर, जंगली सुअर और तेंदुआ इस जंगल में पाये जाते हैं। चूंकि इस वन में शिकार खेलने की मनाई है, इसलिये ये वन्यपशु वहां स्वाधीनता-पूर्वक विचरण करते रहते हैं। उस दिन भी हमें आठ-नौ चीतल और पांच सांभर दीख पड़े। तेंदुआ देखने की लालसा "मन की मन के मांहि रही।"

हम लोग वन-भ्रमण का आनन्द ले रहे थे और शिक्षा तथा संस्कृति सम्बन्धी वार्तालाप करते जाते थे। एक जगह आंवले और ढाक के वृक्ष साथ ही साथ दीख पड़े। हमारे एक मित्र ने, जो वैद्य हैं और साहित्य-प्रेमी भी, कहा था कि कायाकल्प के लिये ऐसा स्थान उपयुक्त माना जाता है, जहां ढाक तथा आंवले के वृक्ष आस-पास उगे हुए हों और उन्हीं के निकट कुटी बनाई जाती है। हमने कहा तब तो इस वन में बीसियों व्यक्तियों का कायाकल्प हो सकता है। वस्तुतः वनों का जीवन ही काया-

कल्प के लिये सर्वोत्तम साधन है। वहां की निर्मल वायु हमारे फेफड़ों के लिये शक्तिप्रद और हमारे जीवन के लिये अत्यन्त लाभप्रद होती है।

दक्षिण अफ्रिका के क्रूगर पार्क की भी चर्चा चली जो क्षेत्रफल में पांच हजार वर्गमील का है, वह सुरक्षित है और वहां कोई शिकार नहीं खेल सकता। सड़कें उसमें बनी हुई हैं। लोग उसकी यात्रा करते हैं और वन्य पशुओं को विचरते हुए देख कर आनन्द का अनुभव करते हैं। आज से आठ-नौ वर्ष पहले जब हमें श्रीमान् ओरछेश के साथ पपौरा के दर्शन करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ था, हमने उनकी सेवा में निवेदन किया था कि आप ऐसी घोषणा करदें कि इस रक्षित अरण्य में कभी भी शिकार नहीं खेला जायगा। उन्होंने उस समय यही उत्तर दिया था "व्यवहारतः इस समय भी यह नियम लागू है, पर वचनबद्ध हो जाने से तो हमेशा के लिए बन्धन हो जायगा।" आज भी हमारी यही आकांक्षा है कि यह वन सदा के लिए 'अभय वन' बना दिया जाय। ओरछा राज्य के इक्कीससौ वर्गमील में आठ वर्गमील तो ऐसे होने चाहिये, जहां किसी पशु-पक्षी को किसी भी प्रकार का भय न हो।

श्रीमान् ओरछेश ने इसी वन में उर नदी का बांध बँधवा कर एक सुरम्य सरोवर का निर्माण कराया है, जिससे इस वन का सौन्दर्य तथा गौरव और भी बढ़ गया है, पर उस समय हमारे पास इतना वक्त नहीं था कि हम उस बांध के भी दर्शन कर लेते। सूरज चढ़ता आ रहा था और हम पपौरा पहुँचने की जल्दी में थे। हम लोग सोच रहे थे कि दर असल

हमारे पूर्वज बड़े दूरदर्शी थे कि उन्होंने अपने तीर्थों का निर्माण ऐसी सुरम्य वनस्थली के निकट किया था।

मरघिल्ली गायें

वन से निकल कर हम लोग सड़क पर आए ही थे कि हमें अस्थि पंजर अवशिष्ट गाय बैल और बछड़ों के दर्शन हुए। 'पानी में मीन प्यासी' का यह प्रत्यक्ष दृष्टांत था। जिस भूमि में गोधन का अच्छे से अच्छा प्रबन्ध हो सकता है और ज्यादा-से ज्यादा उनके सद्वंश की वृद्धि, वहां मरणासन्न गायों को देख कर घोर लज्जा का अनुभव हुआ,, पर अभी हमारे दुर्भाग्य में कुछ और भी बदा था।

घर या काल कोठरी

पपौरा पहुँच कर हमने वहां अध्यापकों तथा छात्रों के कमरे देखे। पण्डित राजकुमार जी जैन साहित्याचार्य प्रधान अध्यापक की कोठरी दस फीट लम्बी और ६ फीट चौड़ी थी, जिसमें वे अपनी धर्मपत्नी तथा छोटी बच्ची के साथ कई वर्ष रहे थे। उसके आगे जो टीन पड़ी थी वह १०×५ फीट थी। भीतर के कमरे में प्रकाश का प्रवेश निषिद्ध था और वायु भी मुश्किल से आ-जा सकती थी। इस जेलखाने में आचार्य महोदय को किस अपराध के कारण पांच वर्ष बितानी पड़ीं, इसका निर्णय हम अभी तक नहीं कर पाए। सम्भवतः जैन समाज में निर्धनता ही सब से बड़ा अपराध है। यह भी मुमकिन है कि उक्त समाज में किसी विद्वान का जन्म लेना ही मौलिक अपराध या बुनियादी जुर्म माना जाता हो। कुछ भी क्यों न हो, पंडित राजकुमार जी को उनकी महाप्राणता के लिए एक पदक अवश्य मिलना चाहिए।

हमें आश्चर्य था कि ऐसे प्रकाश तथा वायु विहीन कमरों में रहकर आदमी जीवित कैसे रह सकते हैं। अन्य कमरे तो राजकुमारजी के कमरे से भी गए-बीते थे। कोई भी समाज अपने पशुओं को भी इनसे बढ़िया स्थल में रखता।

दूरदर्शितापूर्ण भोजनालय

हां, भोजनालय को देख कर हमें प्रबन्धकों की दूरदर्शिता का परिचय अवश्य मिला। वह लम्बा कमरा इतना असुन्दर है कि वहां बैठ कर भोजन करने से किसी भी स्वच्छता प्रिय व्यक्ति की भूख आधी रह सकती है। आजकल के जमाने में जब खाद्य पदार्थ इतने तेज हो गए हैं, जैन समाज ने चौके को इतना अनाकर्षक बना कर बुद्धिमानी का ही काम किया है। आखिर बचत कैसे होती ?

ईंट पत्थर या मनुष्य ?

जब हम बड़े बड़े मन्दिरों या विश्वविद्यालयों के भवनों को देखते हैं तब हमारे मन में एक प्रश्न उठता है "आखिर बड़ा कौन है ? ईंट पत्थर चूना सीमेण्ट ? या मनुष्य ? और अपने चारों ओर हमें यही प्रमाण मिलते हैं कि लोगों की निगाह में मनुष्य का दर असल कोई महत्व नहीं है। वह गन्दे बदबूदार बिल में रहे या प्रकृति के निकट स्वच्छ कुटी में, इस सवाल पर भला कौन ध्यान देता है ?

"गुह्यं ब्रह्म तदिदं ब्रवीमि, नहि मानुषात् श्रेष्ठतरं हि किंचित"

अर्थात् "यह भेद की बात तुम को बताता हूँ कि मनुष्य से बढ़ कर यहां अन्य कुछ नहीं है।"

भगवान व्यास ने यह बात सहस्रों वर्ष पूर्व कही थी पर हम भारतीय उनके इस अमर मन्त्र को भूल गए हैं और हमारी दृष्टि में ईंट पत्थरों के सम्मुख मनुष्य का कोई मूल्य ही नहीं रहा !

हमें क्या अधिकार है ?

हमें क्या अधिकार है कि हम तीस पैंतीस विद्यार्थियों तथा तीन चार अध्यापकों के जीवन के साथ खिलवाड़ करें ? यदि हम उनकी शिक्षा का उचित प्रबन्ध नहीं कर पाते, उनके स्वास्थ्य, खेल-कूद, भोजन इत्यादि की ठीक व्यवस्था नहीं कर सकते तो हमें विद्यालय के इस घटाटोप को खतम ही कर देना चाहिये। हमारा यह दृढ़ विश्वास है कि पपौरा क्षेत्र की स्थिति अब ऐसी हो गई है कि या तो वह उन्नति के लिये अगला क़दम दृढ़ता पूर्वक बढ़ावे और नहीं तो उसकी बागडोर सदा के लिये साम्प्रदायिक घनचक्करी के हाथ में चली जायगी और वह उनके मन बहलाव तथा प्रभुता प्रदर्शन का क्रीड़ा क्षेत्र बन जायगा। उन श्रद्धालु तीर्थ-यात्रियों की बात छोड़ दीजिये, जो आध्यात्मिक भावना से वहां की यात्रा करते हैं, वे तो आते-जाते रहेंगे ही।

निराशा हर्गिज नहीं

पर हम निराश नहीं हैं, क्यों कि हमारा यह दृढ़ विश्वास है कि बुन्देलखण्ड प्रांत में अब जाग्रति का युग आ गया है और जैन-समाज में भी दूरदर्शी आदमियों की कमी नहीं। साथ ही जब हम पपौरा की आज से बीस वर्ष पहले की स्थिति की कल्पना करते हैं और उसमें वर्तमान दशा का मिलान तो आशातीत उन्नति ही पाते हैं।

श्रीयुत ठाकुरदासजी बी० ए० शास्त्री का प्रशंसनीय कार्य

श्रीयुत बाबू ठाकुरदास जी ने पपौरा क्षेत्र के लिये जो कार्य्य किया है उसकी जितनी प्रशंसा की जाय थोड़ी होगी। उनकी अठारह वर्ष व्यापी सेवाओं को हर्गिज नहीं भुलाया जा सकता। कृतघ्नता की नींव पर खड़ी हुई कोई इमारत बहुत दिन तक नहीं टिक सकेगी। आज पपौरा जिस स्थिति को पहुँचा है उसमें श्री० बाबू ठाकुरदास जी का बड़ा भारी हाथ है, पर हमारी कृतज्ञता का यह अर्थ नहीं है कि हम उनके प्रत्येक कार्य्य के समर्थक हैं।

नवीन कार्यकर्ता

समय की गति ने पलटा खाया है और सामाजिक विचारधारा भी प्रकट गति से प्रगतिशील बन गई है। अब जमाना उन लोगों का नहीं रहा, जो प्राचीन निस्सार परम्पराओं को अब भी पकड़े बैठे हैं और जो समय के साथ आगे नहीं बढ़ना चाहते। पपौरा को ऐसे नवीन कार्य्यकर्ताओं की आवश्यकता है, जो दिन-रात उसी की चिन्ता करते रहें, जिन्हें निरन्तर उसी की धुन हो। बहुधन्धी आदमियों के बूते का यह काम नहीं।

पपौरा क्या बन सकता है ?

इस प्रश्न का उत्तर जानने के लिये आपको अहार क्षेत्र के निकट सर्वोच्च पर्वत श्रेणी पर चढ़ना होगा। जब तक हम अहार के निकटस्थ पर्वत पर नहीं चढ़े थे और हमने आस-पास की वनस्थली के दर्शन नहीं किये थे, हम पपौरा तथा अहार क्षेत्र के महत्व को बिल्कुल नहीं समझ पाये थे। वहां पर्वत की चोटी पर पहुँच कर ऐसा प्रतीत होता है कि हम स्विटजरलैण्ड की तरह के

किसी प्रदेश में आ गये हैं। वह विरह। सरोवर पर्वत और उसकी उपत्यिकाऐं सभी अत्यन्त रमणीक दृश्य उपस्थित कर देते हैं।

आज जैन-समाज के पास वह अवसर आ गया है, जो हाथ से निकल जाने पर शताब्दियों तक नहीं आने का। जैन-समाज यदि चाहे तो इस वनस्थली को बुन्देलखण्ड में शिक्षा तथा संस्कृति फैलाने के लिये एक सुदृढ़ केन्द्र बना सकता है। जैन-समाज में अनेक साधन-सम्पन्न व्यक्ति हैं। इन्हें एक बात न भूलनी चाहिये, वह यह कि आगे आने वाले युग में वे ही पूंजीपति अपने को सक्रिय और सजीव पा सकेंगे, जो लोक सेवा की भावना से बिलकुल असाम्प्रदायिक ढंग पर अपने धन का सदुपयोग करेंगे।

तात्कालिक आवश्यकताएँ

पपौरा में औद्योगिक विद्यालय की स्थापना आवश्यक है और उससे बुन्देलखण्डभर का अत्यन्त हित होगा।

पपौरा में तपोवन और उद्योग मन्दिर दोनों का विचित्र सम्मेलनहो सकता है-वहां अध्यात्म तथा उद्योग दोनो धाराओं का अद्भुत संगम स्थापित हो सकता है। ऐसा रमणीक प्राङ्गण (आंगन) भला किस संस्था को प्राप्त है।

इस समय इतना तो होना ही चाहिये :—

१—अध्यापकों के लिये हवादार घर बनवा दिये जावें।

२—छात्रालय का निर्माण हो।

३—पुराने उद्यानों की सुव्यवस्था हो और स्थान स्थान पर नवीन वृक्षों का आरोपण।

४—शिक्षा के विषय में विशेष रूप से तो शिक्षा विशेषज्ञ

ही कह सकते हैं। यदि इन विशेषज्ञों की एक कमैटी सुप्रसिद्ध शिक्षा केन्द्रों में घूम-घूम कर एक व्यावहारिक योजना तैयार कर लें तो छोटी स्केल पर तदनुसार पपौरा में कार्य्य प्रारम्भ किया जा सकता है। हर संस्था से हम उसकी सर्वोत्तम चीज लेलें, उदाहरणार्थ वृक्षों के नीचे पढ़ाई का क्रम हम शान्ति निकेतन से ले सकते हैं, भोजन का सुप्रबन्ध हरिजन-आश्रम दिल्ली से, स्वच्छता और सुव्यवस्था दयालबाग आगरे से।

हम उन बड़े-बड़े आयोजनों के विपक्ष में हैं, जो केवल स्वप्न और चर्चा के विषय ही बने रहते हैं और व्यवहार जगत में जिनका कभी उपयोग नहीं हो पाता।

विद्वत् समिति की स्थापना

यदि जैन-समाज विद्वत समिति की स्थापना कर सके, जिसके २०।२५ सदस्य हों और जिसके पास अपने कार्य्यक्रम को पूरा करने के लिये रुपये की कमी न पड़े, तो निस्संदेह जैन-संस्थाओं का बड़ा हित हो सकता है। स्थानीय सभापतियों के सहयोग से यह विद्वत् समिति वर्तमान जैन संस्थाओं का नियंत्रण तथा संचालन कर सकती है। आज तो जैन संस्थाओं के अनेक अध्यापक इधर-उधर पूंजीपतियों की खुशामद करते हुए दीख पड़ते हैं और चन्दा उघाना उनका एक आवश्यक कर्त्तव्य सा हो गया है। सरस्वती के उपासकों को लक्ष्मी वाहनों का मुँह बार-बार ताकना पड़े, इससे अधिक लज्जाजनक बात और क्या हो सकती है?

श्रद्धालुओं को निमन्त्रण

आज भी जैन-समाज में अनेक श्रद्धालु व्यक्ति विद्यमान हैं। उन्हें हम सहर्ष निमन्त्रण देते हैं कि वे एक बार इस

रमणीक स्थल को देखें और फिर उसकी सम्भावनाओं पर विचार करें। बड़े-बड़े शहरों में मामूली मन्दिर बनवाने में जितना व्यय होता है उससे आधे व तिहाई में ही पपौरा का उद्धार हो सकता है।

सेवा के लिये बुन्देलखण्ड से बढ़ कर क्षेत्र भारत में शायद ही कहीं विद्यमान हो!

प्राकृतिक साधनों के सदुपयोग से जो कार्य्य यहां हो सकते हैं वे अन्यत्र अत्यन्त व्यय साध्य होंगे। उदाहरणार्थ आयुर्वेद-विद्यालय के लिये यह स्थान खास तौर से उपयुक्त है। जड़ी-बूटियों की यहां बहुतायत है और अनेक आवश्यक औषधियां यहां बड़ी आसानी से तय्यार की जा सकती हैं। आंवलों का जंगल का जंगल है, चाहे जितना च्यवन प्राश तैयार कीजिये! अनेक दुर्लभ फल फलेरी यहां सुलभ हैं। सीताफल बेशुमार पाये जाते हैं और जामुनों को कोई टके सेर भी नहीं पूंछता। नीबू यहां खूब पैदा किये जा सकते है और नारंगियां भी अच्छी हो जाती हैं।

सन् १६५५ में पपौरा

हम स्वप्न देख रहे हैं कि सन १६५५ में पपौरा बुन्देलखंड में केवल जैन-समाज का ही नहीं वरन् सम्पूर्ण बुन्देलखण्ड का तीर्थ स्थल बन जायगा! स्वास्थ्य के लाभार्थ आस पास के वन की सेर करने के लिये सैकड़ों सहस्रों व्यक्ति यहां आया करेंगे। यहां के आयुर्वेदिक औषधालय की प्रमाणयुक्त औषधियां भारत-भर में भेजी जावेंगी। एक बहुत ही बढ़िया गोशाला उसके अधीन होगी, जहां नर्वदा बेतवा, सिंध, गंगा, जमना इत्यादि नामों की दुधारू गायें सैकड़ों की संख्या में विद्यमान होंगी। कहीं आम्रनिकुञ्ज होंगे, कहीं वेणुकुञ्ज और कहीं नीबू नारंगी के वृक्षों की कतार की कतार। स्वतंत्र आकाश के नीचे उन्मुक्त वायु में

पचासों छात्र पढ़ते हुए दीख पड़ेंगे। वर्षोत्सव, शरदोत्सव और वसन्तोत्सव मनाये जावेंगे। शिक्षा का अर्थ रट कर परीक्षा पास कर लेना न होगा। बालकों के मानसिक विकास के साथ उनका हार्दिक उल्लास भी होगा। उनके खेल कूद और बालसुलभ कोलाहल से आकाश गुञ्जायमान होगा। संस्था के संचालक फिरकेबन्दी से सर्वथा दूर रह कर सभी जातियों और धर्मों के बालकों का वहां दिल खोल कर स्वागत करेंगे। आस पास की जनता की सेवा करना उसे सुखी तथा समृद्ध बनाना—इस सांस्कृतिक केन्द्र का मुख्य उद्देश्य होगा।

क्या यह असम्भव है?

कुछ निराशावादी पाठक इस स्वप्न को असम्भव मान सकते हैं पर हमारी दृष्टि में तो यह सोलह आने सम्भव है।

आज के स्वप्न कल की वास्तविकता बन सकते हैं। जिस समाज मे दानवीर साहु शान्तिप्रसाद जी और सवाई सिंघई धन्यकुमार जी जैसे नवयुवक विद्यमान हों उसे निराश होने की जरूरत नहीं।

पपौरा के विषय में और जो कुछ कहना है उसे इस पुस्तिका के अन्य लेखकों ने अपने लेखों में योग्यता पूर्वक कह ही दिया है। हम उन सब के अत्यन्त कृतज्ञ हैं और विशेषतः बन्धुवर श्री धन्यकुमार जी (पता—कुमार कुटीर कटनी मध्य प्रदेश) के, जिनकी सहायता से इस पुस्तिका का छपना सम्भव हुआ है।

हमारा दृढ़ विश्वास है कि इस पुस्तक से जैन-समाज को अपने अतिशय तीर्थ का और उसकी सम्भावनाओं का बहुत कुछ ज्ञान हो जायगा और निकटभविष्य में हमारे ये स्वप्न भी सत्य सिद्ध होंगे, जो हम आठ नौ वर्ष से इस सुरम्य तीर्थस्थल के विषय में देखते रहे हैं। एवमस्तु।

[कुण्डेश्वर, टीकमगढ़]   बनारसीदास चतुर्वेदी।

पपौरा की झाँकी

श्री राजकुमार जैन साहित्याचार्य

कुन्देलखण्ड के दर्शनीय स्थलों में पपौरा अपना एक निराला ही स्थान रखता है । ओरछा-राज्य की वर्तमान राजधानी टीकमगढ़ से यह पूर्व मे तीन मील की दूरी पर है । यहाँ दिगम्बर-जैनो के पिचत्तर जैन-मन्दिर हैं । ये मन्दिर इतने विशाल हैं कि कई मील की दूरी से इनके दर्शन होने लगते हैं । बानपुर (जो पपौरा से नौ मील दूर है) के निवासीवहाँ के जैन-मन्दिर की छत पर खड़े होकर उनकी झाँकी ले सकते हैं और कुण्डेश्वर में रहने वाले कुण्डवाली कोठी की छत पर से इन्हें देखकर इनकी भव्यता पर मुग्ध हो सकते हैं । ये मन्दिर बहुत प्राचीन हैं और इनकी शिल्पकला तो दर्शकों के मन को प्रभावित किए बिना नहीं रहती । चन्द्रमा के उज्ज्वल प्रकाश में माडूमार की टौरियों और पपौरा की तलैया पर खड़े होकर इन मन्दिरों को देखने का मुझे अनेकों बार सौभाग्य प्राप्त हुआ है और उस समय पपौरा के एक अलौकिक रजतखण्ड के रूप में दर्शन कर खूब सात्विक आनन्द लूटा है । यहाँ के मन्दिर तो भिन्न-भिन्न काल की शिल्पकलाओं के सुन्दर नमूने हैं ही, साथ ही इनमें प्रतिष्ठित जिन-प्रतिमाएँ भी अपने स्वाभाविक सौन्दर्य से दर्शकों के चि त को हठात् अपनी ओर खींच लेती हैं ।

अब से तीस वर्ष पहले का पपौरा

आज से लगभग तीस वर्ष पहले पपौरा की स्थिति बहुत खराब थी । यहाँ के अधिकांश मन्दिर जीर्ण हो रहे थे । सिढ़ियाँ

और चमगादड़ों ने इनमें सपरिवार डेरा डाल रखा था । हवा और प्रकाश जाने के मार्ग न थे । कोट के भीतर छोटी-मोटी झाड़ियां थीं, जिनके कारण इसने एक छोटे, किन्तु भयानक जंगल का रूप धारण कर लिया था । एक-दो आदमियों की अन्दर जाने और वहाँ ठहरने की हिम्मत ही न होती थी । आज से लगभग सोलह वर्ष पहले मैंने स्वयं अपने साथियों के साथ एक झाड़ी में सिंहनी के बच्चे देखे थे ।

पपौरा का वर्तमान रूप

पपौरा को वर्तमान रूप में लाने का सब से अधिक श्रेय स्वर्गीय पंडित मोतीलाल जी वर्णी को है । यह बाल-ब्रह्मचारी थे और जनसाधारण का अज्ञानान्धकार हटाने की अविराम साधना ही में उन्होंने अपना जीवन समर्पित कर दिया था । आज से लगभग पैंतीस वर्ष पहले पपौराजी के दर्शन कर उन्हें अपूर्व आनन्द प्राप्त हुआ, साथ ही यहाँ की शोचनीय स्थिति ने उनके हृदय को अत्यन्त क्षुब्ध भी किया । उन्होंने सोचा कि यहाँ के मन्दिर सात्विक आनन्द के अनुपम साधन हैं । उनमें बैठ कर कोई भी सहृदय लोक-कल्याण की सर्वोत्तम भावना से प्रभावित हो सकता है । उन्हीं की यह दयनीय दशा ! यह वही बीज है जो जैन-समाज की उदारता, टीकमगढ़,पठा आदि प्रान्तीय पञ्चायतों तथा बाबू ठाकुरदासजी जैन शास्त्री बी० ए० के शुभ प्रयत्नों द्वारा अङ्कुरित और पल्लवित हुआ और आज उसका वर्तमान रूप हमारे सामने है ।

पपौरा की ऐतिहासिकता

पपौरा एक ओर प्राकृतिक सौन्दर्य से परिपूर्ण है तो दूसरी ओर इतिहास की दृष्टि से भी महत्त्वपूर्ण है । जिन-

प्रतिमाओं के आसनों पर जो शिलालेख उत्कीर्ण हैं, उनमें इतिहास की जो सामग्री सञ्चित है, वह बुन्देलखण्ड की ऐतिहासिक परम्परा को प्रकाश में लाने मे काफी सहायक हो सकती है। यहाँ के मन्दिरों की शिल्पकला और मूर्ति-निर्माण-कला के अध्ययन भी शिल्पकला और मूर्ति-निर्माण-कला के भिन्न-भिन्न कालीन इतिहास पर प्रकाश डाल सकते हैं। जरूरत इस बात की है कि इन कलाओं के विशेषज्ञ विद्वान पपौरा पधारें और अपने अध्ययन के आधार पर इस सम्बन्ध में खोज करें। २३ जून १९४१ को महात्मा भगवानदीनजी पपौरा के दर्शनार्थ आए थे। उन्होंने भी निरीक्षण-सम्मति-बुक में अपनी यही राय प्रकट की थी—"यह क्षेत्र सचमुच एक ऐसे व्यक्ति के निवास के योग्य है, जो जैन-मूर्ति-कला का अध्ययन करना चाहता हो।"

कुछ ऐतिहासिक शिलालेख

यहाँ सबसे पुराना एक भोंयरा है, जो जमीन के अन्दर है। वहाँ एक ऐसी प्रतिमा है, जिसके नीचे कोई भी लेख नहीं है। यह बहुत ही मनोज्ञ और भव्य प्रतिमा है। काले पत्थर की है। पालिश इतनी सुन्दर कि देखने वालों को ऐसा मालूम होता है जैसे तेल में नहा रही हो। कोई लेख न होने से यह अनुमान करना कठिन है कि यह प्रतिमा कब तैयार करा कर प्रतिष्ठित की गई है। इस प्रतिमा के दाहिनी और बाईं ओर जो दो प्रतिमाएँ हैं, उनके नीचे ये लेख हैं—

(१) 'संवत् १२०२ आषाढ़ वदी १० बुधे दिने गोला-पूर्वान्वये साहु गल्हे तस्य सुतो अलकन नित्यं प्रणमन्ति॥'

अर्थात्—संवत् १२०२ आषाढ़ वदी १० बुधवार के दिन

गोला पूर्व अन्वय (कुल या जाति) के साहु गल्हे और उनका पुत्र अलकन हमेशा नमस्कार करते हैं।

(२) 'संवत् १२०२ आषाढ़ बदी १० बुधे श्रीमदनवर्मदेवराज्ये भोपालनगरवासीक गोलापूर्वान्वये साहु दुड़ा सुत साहु गोपाल तस्य भार्या माहिणी सुत सान्हु प्रणमन्ति नित्यं जिनेश चरणारविन्दं पुण्य प्रतिष्ठाम्।'

अर्थात्--संवत् १२०२ आषाढ़ बदी १० बुधवार के दिन मदनवर्मदेव के राज्य में भोपाल में रहने वाले, गोलापूर्व जातीय साहु दुड़ा, उनके लड़के साहु गोपाल, उनकी पत्नी माहिणी, उनका सुपुत्र सान्हु पुण्य-लाभ के लिए श्री जिनेश के चरण-कमल को नित्य प्रणाम करते हैं।

इसके बाद का एक शिलालेख संवत् १५२४ चैत्र कृष्णा १ शुक्रवार का है। यह शिलालेख चन्द्रप्रभ मन्दिर में प्रतिष्ठित ६॥ फीट ऊँची प्रतिमा के नीचे उत्कीर्ण है, लेकिन खेद है कि प्रस्तुत प्रतिमा के नीचे के हिस्से के जीर्ण हो जाने से यह लेख पूरा पढ़ने में नहीं आता।

मन्दिर संख्या २१ के प्रतिबिम्ब के नीचे यह शिलालेख उत्कीर्ण है—

संवत् १६८७ वर्षे वैसाख सुदी ८ शनौ श्रीमूलसंघे २० श्रीललितकीर्ति तत्पट्टे भट्टारक श्री रत्नकीर्तिदेवोपदेशात् पौरपट्टान्वये सा० हीराचन्द्र भार्या चतुरा पुत्र २ सा० दया सा० खम...... भ्राता सा० मतुराय भार्या पार्वती तत्पुत्र ४ गोविन्द १ अमर २ मथुर ३ सदई ४ सा० मोहन भार्या शुभा तत् प्रणमंति।

अर्थात्—संवत् १६८७ की साल वैशाख सुदी ८ शनिवार के दिन श्रीमूल संघ में (२० वें ?) श्री ललितकीर्ति भट्टारक हुए।

उनके पट्ट पर आसीन भट्टारक रत्नकीर्तिदेव के उपदेश से— पौरपट्टान्वयी साहु हीराचन्द्र उनकी पत्नी. चतुरा, उनके दो पुत्र साहु दया और साहु खरा······(जिनके) भाई साहु सतुराय, पत्नी पार्वती, इनके पुत्र चार—पहले गोविन्द, दूसरे भ्रमर, तीसरे मथुर, चौथे सदई। साहु मोहन, पत्नी शुभा उसे पूजती है।

इस शिलालेख का कुछ अंश खंडित है, इसलिए यह पता लगाना कठिन है कि साहु मोहन का इस शिलालेख में आये हुए अन्य लोगों के साथ क्या सम्बन्ध था। लेकिन शिलालेख में आये हुए 'चर्चति' क्रिया से जो एक वचन है—यह मतलब अवश्य निकलता है कि भट्टारक रत्नकीर्तिदेव के उपदेश से साहु मोहन की पत्नी शुभा ने इस मन्दिर का निर्माण कराया है।

मन्दिर संख्या १३ की प्रतिमा के नीचे का शिलालेख इस प्रकार है—

श्री ॐ नमो वीतरागाय। हरिचन्द्र······फाल्गुणे कृष्ण-पक्षेकवर्षे चन्द्रायण मन्दे जिनबिम्ब प्रतिष्ठितम्। संवत्१७१८वर्षे फाल्गुणे मासि कृष्णपक्षे १ ···वृषभजिनबिम्बं प्रतिष्ठितम्।··· कृष्यादेरुपदेशिने। युगादिधर्मदानेन प्रापिताः सज्जनाः शिवम् ॥ तस्मै श्रीजिननाथाय वृषभाय महीयसे। नमो भवतु धीराय शिव-दात्रे शिवाय च ॥२॥ श्रीमूलसंघे बलात्कारगणे सरस्वतीगच्छे कुन्दकुन्दाचार्याम्नाये भट्टारक श्री ६ धर्मकीर्तिदेवस्तत्पट्टे भट्टारक श्री ६ पद्मकीर्तिदेवस्तत्पट्टे भट्टारक श्री ६ सकलकीर्तिरुपदेशोनेयं प्रतिष्ठा कृता। तद्गुरुराचोपाध्यायनेमिचन्द्रः। पौरपट्टे अष्टशाखा श्रये घनामूले कासिल्लगोत्रे साहु आधार भार्या लालमती पुत्र ४ ज्येष्ठ अधिपति साहु भगवानदासस्तस्य भार्या हीरा। पुत्राः ४ भीखे १ नत्थू २ दयाति ३ घनश्याम ४ ॥ १ ॥ द्वितीय साहु भग-

मणि: भार्या रमौसी पुत्र १ जगसेन ॥२॥ तृतीय साहु मोहनदास भार्या भगवती, पुत्र ३ साहु मायाराम १ श्रेयान्सदास २ गोपालदास ३ ॥३॥ चतुर्थ साहु ग्वालीदासस्तत्पुत्र हरिवंशदास भार्या रूपवती, पुत्र साहु जगन्नाथ एते सकुटुम्बा नित्यं प्रणमन्ति । लेखक पाठकयोर्मङ्गलम् ॥

अर्थात्—१७१८ सम्वत् की फाल्गुन कृष्णा एकम के दिन आदिजिनबिम्ब की प्रतिष्ठा हुई। .... कृषि आदि का जिन्होंने उपदेश दिया, युग के आदि में धर्मोपदेश देकर सज्जनों की भलाई की, उन जिननाथ, धीर, मोक्ष देने वाले और मङ्गलमय आदिनाथ भगवान् के लिये नमस्कार हो॥ २॥ श्रीमूलसंघ, बलात्कारगण, सरस्वतीगच्छ और कुन्दकुन्द आचार्य के आम्नाय (परम्परा) में भट्टारक श्री ६ धर्मकीर्तिदेव हुए। इनकी गद्दी पर पद्मकीर्तिदेव हुए। इनके पट्ट (गद्दी) पर आसीन भट्टारक श्री ६ सकलकीर्ति के उपदेश से यह प्रतिष्ठा हुई। इनके आदि गुरु उपाध्याय नेमिचन्द्र हैं।

पौरपट्ट के अष्टशाखा वाले धनामूरी कासिल्ल गोत्र में साहु आधार हुए। इनकी पत्नी का नाम लालमती था। इनके चार पुत्र थे। ज्येष्ठ पुत्र का नाम भगवानदास था और पत्नी का नाम हीरा। इनके भी चार पुत्र थे—पहले मीखे, दूसरे नत्थू, तीसरे दयाति और चौथे घनश्याम। साहु आधार के दूसरे पुत्र का नाम जगमणि था और पत्नी का नाम रमौसी। इनके जगसेन नाम का एक ही पुत्र था। तीसरे पुत्र का नाम साहु मोहनलाल था और पत्नी का नाम भगवती। इनके तीन पुत्र थे, साहु मायाराम, श्रेयान्सदास और गोपालदास। चौथे पुत्र का नाम साहु ग्वालीदास था और उनके पुत्र का नाम हरिवंशदास।

पुत्रवधू का नाम रूपवत्ती था। इनके पुत्र का नाम साहु जगन्नाथ था। यह सकुटुम्ब (आदि भगवान् को) प्रणाम करते हैं। लेखक और पाठक, दोनों का कल्याण हो।

यह शिलालेख भी कुछ खण्डित है, इसलिये पूरा नहीं पढ़ा जा सका।

मन्दिर संख्या २२ की प्रतिमा के नीचे का शिलालेख भी पूर्ण नहीं है। जो भाग पढ़ा जाता है, वह इस प्रकार है—

सम्वत् १६७६ वर्षे फाल्गुण वदी ६ श्री महाराजाधिराज श्री उद्योतसिंहजू देव श्रीभट्टारक धर्मकीर्तिस्तत्पट्टे श्रीपद्म कीर्तिदेव स्तत्पट्टे भट्टारक सकलकीर्तिदेव . . . ।

अर्थात—श्री महाराजाधिराज श्री उद्योतसिंहजू देव के राज्य में सम्वत् १६७६ की फाल्गुन कृष्णा ६ के दिन भट्टारक धर्मकीर्ति के पट्टासीन पद्मकीर्ति और उनके पट्ट पर आसीवानी भट्टारक सकलकीर्तिदेव . ...।

निम्नलिखित शिलालेख मन्दिर संख्या ३६ की प्रतिमा के नीचे उत्कीर्ण है, लेकिन यह भी अपूर्ण है।

'सम्वत १८६० मार्गकृष्णदशमी भृगुवासरे परगनौ ओरछौ श्री महाराजकोमार श्री महाराजाधिराज श्री महेन्द्र बहादुर-विक्रमाजीतस्य राज्ये नग्र टीकमगढ़ ....।'

अर्थात—महाराजकुमार, महाराजाधिराज, महेन्द्र बहादुर श्री विक्रमाजीत के ओरछा-राज्य में अगहन वदी १० भृगुवार, सम्वत् १८६० के दिन टीकमगढ़ नगर.........।

एक और शिलालेख सं० १८६२ का है, जिसमें महाराज श्री तेजसिंहजू के राज्य का नामोल्लेख है।

एक शिलालेख १६०३ का है, जिसमें महाराजाधिराज सुजानसिंहजू के राज्य का उल्लेख है।

इस तरह यहाँ की प्रतिमाओं के नीचे अनेक महत्त्वपूर्ण शिलालेख अङ्कित हैं। यदि कोई महानुभाव इनका अध्ययन करें तो इतिहास के लिए बड़ी उपयोगी और महत्त्वपूर्ण सामिग्री एकत्रित हो सकती है।

मूर्ति-कला और चित्र-कला

यहाँ के मन्दिरों की चित्रकला और मूर्तिकला भी कम दर्शनीय नहीं है, यद्यपि चित्रकला थोड़े ही मन्दिरों में है। हम इन कलाओं के विशेषज्ञ नहीं हैं, लेकिन इनके दर्शन करते करते हमने अनेक बार दर्शकों को झूमते देखा है। मन्दिर नं० ७८ की चित्रकला पर तो वर्तमान ओरछा-नरेश एक बार स्वयं मुग्ध हो गये थे। खेद है कि पुष्ट छाव न होने से चूने के गिरने के साथ ही इस मन्दिर की यह आकर्षक चित्रकला भी नष्ट होने लगी है।

स्थानीय भोंयरे की भगवान् शान्तिनाथ की मूर्ति तो भारतीय जैन-मूर्तिकला के दस-बीस सर्वोत्तम उदाहरणों में से है। उसके प्रसन्न मुखमण्डल पर अनिंद्य सौन्दर्य, गम्भीर स्मित और प्रशान्त वीतरागता है और इनके कारण वहाँ एक ऐसा अद्भुत वातावरण उत्पन्न हो गया है, जो सहृदय दर्शक को घड़ीभर के लिए अपने मे आत्मसात् कर लेता है। दर्शक उस वातावरण में पहुँच कर चकितसा होकर उस लोक में पहुँच जाता है, जहाँ सम्पूर्ण वीतरागता है—न राग है, न द्वेष, न लोभ है, न क्षोभ। कलाकार ने इस अनिन्द्य सौन्दर्य को, इस प्रशान्त वीतरागता को, और इस गम्भीर स्मित को

मूर्तिमन्त करने के लिए कितनी साधना न की होगी। मूर्ति की सम्पूर्ण रचना प्रसन्न, निर्मम और निर्विकार है और इसके अङ्ग-प्रत्यङ्ग से सात्त्विकता और निर्मोहिता टपकती है। पपौरा में इस प्रकार की दो-चार मूर्तियाँ और भी हैं।

अन्य विशेषताएँ

पपौरा में कुछ और विशेषताएँ हैं—

१—प्राचीन समुच्चय—पपौरा का यह सब से प्राचीन स्थान है, जो 'प्राचीन समुच्चय' के नाम से प्रसिद्ध है। इसके बीच में एक मन्दिर है और इसके चारों ओर बारह पुराने ढङ्ग के मठ हैं। मालूम होता है कि पहले यहाँ साधु रहा करते होंगे। इस स्थान को लोग 'सभा-मण्डप' कहते हैं।

२—भोंयरा—इस प्राचीन समुच्चय के स्थान में एक और भोंयरा है। यह बहुत विशाल है। इसमें काफी ऊँची छत वाले तीन कमरे हैं। एक कमरा तो बाईस फीट लम्बा और नौ फीट चौड़ा है। यहाँ एक भी मूर्ति नहीं है।

३—चौबीसी—एक बड़े मन्दिर के चारों ओर प्रत्येक दिशा में छह-छह मन्दिर हैं। इस तरह एक ही स्थान में चौबीस मन्दिरों की यह पंक्तिशः रचना बहुत भली मालूम होती है। सब मन्दिरों की एक साथ और प्रत्येक की पृथक्-पृथक् परिक्रमा की व्यवस्था है।

४—चन्द्रप्रभ-मन्दिर—इस मन्दिर की रचना और शिल्पकला बहुत पुरानी है और इस कला के विशेषज्ञों के अध्ययन की एक खास चीज है।

किंवदन्तियाँ

यह नहीं कहा जा सकता कि सभी किंवदन्तियाँ एकदम सत्य या असत्य ही होती हैं। कुछ सत्य भी होती हैं और कुछ

असत्य भी। लेकिन इनका आधार कुछ-न-कुछ रहता जरूर है। पपौरा के अतिशय के सम्बन्ध में भी कुछ किंवदन्तियां प्रचलित हैं। अधिकारपूर्ण रूप से नहीं कहा जा सकता कि ये कहाँ तक सत्य या असत्य हैं।

१—यहाँ एक पुरानी बावड़ी है। थोड़े दिन हुए इसकी मरम्मत भी करा दी गई है। सुनते हैं, वर्षों पहले यह हमेशा ऊपर-तक जल से भरी रहती थी। इसकी विशेषता थी कि जब किसी यात्री को भोजन बनाने आदि के लिए बर्तनों की जरूरत होती तो वे आवश्यक बर्तनों की लिखित सूची इसमें डालते थे और बर्तन पानी के ऊपर आ जाते थे। यात्री अपना काम निकाल कर फिर उन्हें बावड़ी ही में डाल आते थे। ये बर्तन बहुत सुन्दर और चमकीले होते थे। एक दिन एक मनचला यात्री आया और इन बर्तनों के सौन्दर्य पर मुग्ध होकर इन्हें लेकर चलता बना। तभी से इस बावड़ी ने अपना दान देना बन्द कर दिया।

२—घटना वि० संवत् १८७२ के पहले की है। पपौरा की वर्तमान मन्दिर-क्रम-संख्या के अनुसार पहले मन्दिर की नींव भरी जा चुकी थी। एक वृद्धा मां की ओर से इस मन्दिर का निर्माण हो रहा था। उस अवसर पर उपस्थित जनता को भोज देना भर बाकी था। लेकिन कुएँ का (जो अब भी स्थानीय विद्यालय के भोजनालय के पास विद्यमान है) पानी खतम था। शोर-गुल मच गया। मन्दिर-निर्माण कराने वाली वृद्धा रस्सों से बँधी चौकी पर बैठकर भगवान् के नाम की माला फेरती कुए में उतरीं और जैसे-जैसे वह ऊपर आती गईं, कुँए का पानी चौकी से छूता हुआ बढ़ता गया। अन्त में वृद्धा के बाहर आते ही कुँए का पानी बाहर निकल पड़ा। कहते हैं तभी से इसका नाम

' पत-राखन ' रख दिया गया—जिसका अर्थ है ' लाज रखने वाला । ' आज भी लोग इसे इसी नाम से जानते हैं ।

३—श्री भोंयरा और चन्द्रप्रभ-मन्दिर के दर्शन करने से लोग अपनी कामनाएँ पूर्ण होती पाते हैं । सौभाग्यवती महिलाएँ सन्तान की इच्छा से यहाँ हार्ते लगाती हैं ।

हमारा अनुमान

पपौरा का दूसरा नाम ' पम्पापुर ' है । इसके पास ही एक विशाल जङ्गल है जो 'रमन्ना' के नाम से प्रसिद्ध है । रमन्ना का शुद्ध रूप मुझे 'रामारण्य' जँचता है, जिसका अर्थ होता है—रामचन्द्र का जङ्गल । वाल्मीकि रामायण में ' पम्पा ' नाम के सरोवर पर रामचन्द्रजी की हनुमान के साथ भेंट का उल्लेख है । मेरा अनुमान है कि पपौरा के किसी आसपास के तालाब का नाम शायद ' पम्पा ' रहा हो और उसी आधार को लेकर पपौरा का 'पम्पापुर' नाम पड़ा हो । हो सकता है कि श्रीरामचन्द्र के विहार से रामारण्य बिगड़ते-बिगड़ते ' रमन्ना ' कहलाने लगा हो । यह मेरा अनुमान मात्र है । अगर यह सत्य है तो यह कहना अनुचित न होगा कि पपौरा श्रीरामचन्द्रजी और हनुमान की भेंट का भी वह प्राचीन स्मारक-स्थल है, जहाँ रामचन्द्रजी ने अपने असह्य संकट के समय सीता-मिलन के सम्बन्ध में हनुमान से मंत्रणा की होगी ।

पपौरा के पास की वनस्थली

यद्यपि पपौरा का अधिकांश भू-भाग खाली मैदान के रूप में पड़ा हुआ है, लेकिन पपौरा के चारों ओर—विशेषकर उत्तर दिशा की वनस्थली की जो नयनाभिराम शोभा है, वह देखते ही बनती है । आम, अचार, आँवला, महुआ,

पीपल, बेर, ढाक, जामुन, कंजी, चिरोल, बाँस, सैमर आदि वृक्षों की हरी-भरी श्रेणियाँ किस सहृदय का हृदय नहीं हरतीं? करोंदी के फूलों की महक से चित्त मस्त हो जाता है और भोंरमार के लाल-पीले फूलों का उपवन देखकर नेत्र प्रफुल्लित हो उठते हैं। प्रातःकाल हिरनों को चौकड़ी भरते देखकर दिल बांसों उछलने लगता है और खरगोशों का आत्मरक्षा के ख्याल से कान दबा कर एक झाड़ी से दूसरी झाड़ी में छिप जाने का भोलापन चित्त में मानव-सुलभ करुणा पैदा कर देता है। कोयल, मोर, गलगल, गौरैया आदि पक्षियों की मधुर वाणियों और शृगाल, चीते, तेंदुआ और बराहों की आवाज से यह वनस्थली प्रायः गूंजती रहती है। प्रकृति-प्रेमी यहाँ भ्रमण करके जब चाहें आनन्द लूट सकते हैं।

स्थानीय विद्यालय

इस विद्यालय का नाम श्री वीर दिगम्बर जैन विद्यालय है। आज से पचास वर्ष पहले स्वर्गीय पण्डित मोतीलालजी वर्णी ने इसकी स्थापना की थी। यहाँ संस्कृत की शिक्षा के साथ हिन्दी, गणित, इतिहास, भूगोल और अँग्रेजी की भी शिक्षा दी जाती है। प्रान्तीय जैन-समाज की जागृति के इतिहास मे इस संस्था का खासा हाथ रहा है।

हमारा स्वप्न

पपौरा के सम्बन्ध में हमारी बड़ी-बड़ी धारणाएँ हैं। इन धारणाओं को लेकर हम प्रायः स्वप्न-लोक में विचरण किया करते हैं। अभी उस रात के पिछले पहर में हमने जो स्वप्न देखा है, उसे हम यहाँ ज्यों-का-त्यों दे रहे हैं।

(१) पपौरा का जो स्थान खाली पड़ा था, उसमें आम, अशोक, मौलश्री और नीम की वृक्षावली लहरा रही है।

(२) यहाँ दोनों बागों में कलमी आम, अमरूद, संतरा, केला और नीबू के पेड़ लगे हुए हैं और वे इतना फूलते-फलते हैं कि यहां के निवासियों का काम तो चल ही जाता है, साथ ही इनकी बिक्री से क्षेत्र को अच्छी आय होने लगी है।

(३) विद्यालय के सामने के अहाते में एक छोटा किन्तु बहुत सुन्दर उद्यान लगा हुआ है। छोटे-छोटे कुञ्ज, रंग-बिरंगी क्यारियाँ और लताच्छादित दरवाजों की शोभा देखते ही बनती है।

(४) विद्यालय का नवीन छात्रावास, जो अधूरा पड़ा था, पूरा हो गया है।

(५) स्थानीय विद्यालय एक 'विद्या-मन्दिर' के रूप में परिवर्तित हो गया है। इसमें दोसौ पचास विद्यार्थी अध्ययन कर रहे हैं। अब यहाँ अनेक भाषाओं की उच्चकोटि की शिक्षा दी जाने लगी है।

(६) विद्यालय से सम्बद्ध एक गोशाला है, जिसमें बहुत-सी गाएँ हैं। विद्यार्थियों को सुबह-शाम खूब दूध मिलता है।

(७) क्षेत्र में एक भी मन्दिर जीर्ण नहीं रहा है और स्थानीय धर्मशालाओं का काया-कल्प हो गया है।

(८) यहाँ की तलैया विशाल सरोवर के रूप में परिणत हो गई है। विद्यार्थी, क्षेत्रीय कर्मचारी और अध्यापक इसमें स्नान करते हैं। पथिक और जङ्गली पशु-पक्षियों के लिए पानी का सुभीता हो गया है।

कुण्डेश्वर,
(टीकमगढ़)

— • —

पपौरा के प्रतिमा-लेख

मंदिर १ (श्री आदिनाथ जी)

संवत् १८७२ फल्गुण मासे शुक्ल पक्षे तिथ १ प्रतिपदायां गुरुवासरे श्री मूल संघ बलात्कार गणे सरस्वती गछे श्री कुंद-कुंदाचार्जन्वये पडगनो ओडछो नग्र टेहरी तत्समीपे क्षेत्र पपौरा.........श्री वषत विक्रमाजीत राज्ये.........तत्रस्थाणे प्रतिष्टाकारक छत्रपुर वाले सिघे संतोषरायतस्य भार्या साष कुवर तयो पुत्र सिघै मणरायण तत्र भार्या वषत कुवर नित्यं प्रनमंति।

मंदिर २ (श्री सुपार्श्वनाथ जी)

संवत् १८८३ वैसाष मासे शुक्ल पक्षे तिथि पंचम्यां शुक्र-वासरे श्री मूल संघे बलात्कार गणे सरस्वती गछे श्री कुंदा चार्याम्नाये श्री सवाई सिघई संतोषरा तस्य पुत्र सवाई सिघई मनराषन तस्य भार्या सिघैन बषतो तेनेदं श्री नग्र टीकमगढ तत्समीपे क्षेत्र पपौरा म श्री जिन प्रतिमा प्रतिष्टित—श्री रस्तु कल्यानमस्तु।

मंदिर ३ (श्री चन्द्रप्रभ जी)

संवत् १८९२ पौष मासे कृष्ण पक्षे ५ बुद्धवासरे श्री महा-राजकोमार श्री महेन्द्र बहादुर श्री महाराज तेजसिंघ राज्य मद्धे श्री मूल संघे बलात्कार गणे सरस्वती गछे श्रीकुंदकुंदाचार्या-म्नाये सिघै कलयान साहु भार्या नौनी सुनु नंदकिशोर—

मंदिर ४ (श्री विमलनाथ जी)

संवत् १८८२ फाल्गुण सुक्ल पक्ष तिथि १० दशम्या रविवासर श्री मूल संघे बलात्कारगणे सरस्वती गछे श्री कुंद-कुंदाचार्याम्नाये श्री सराफ सुकल तस्य भार्या द्वयो प्रथम भार्या मायादे दुती भार्या स्यामा तस्यात्मज पुत्र द्वयो प्रथम पुत्र श्री सर्राफ भारतसाह तस्य भार्या द्वयो प्रथम भार्या जसो दुती भार्या सूदरी श्री सराफदेवजू तस्य भार्या द्वयो प्रथम भार्या गुनो दुती भार्या माराजो भारतमाया पुत्र ३ प्रथम पुत्र श्री सराफ रांमचन्द्र तस्य भार्या तुरसो दुती पुत्र श्री सराफ नंन्हें तस्य भार्या अंचाई तृतीय पुत्र श्री सर्राफ कलियान साह व भार्या रमो तेनेदं पडगनौ औडछौ श्री नग्र टीकमगड तत्समीपे क्षेत्र पपाराजू मध्य श्रीजिण चैत्यालय व श्रीजिण प्रतिमा प्रतिष्टितं॥ दस क्रत शुभ सुष—

मंदिर ५ (श्री पार्श्वनाथ जी)

संवत् १६०४ प्रथे फाल्गुण मासे सुभे कृश्न पक्षे तिथ ८ रविवासरे कौं श्री मूल संघे बलात्कारगने सरस्वती गच्छ श्री कुंद कुंदाचार्याम्नाये न यत परवार ओर्छाक्ष मूरी कोछक्ष गोत्र सराफ सुकल तस्य भार्या द्वयो प्रथम भार्या मायादे दुतिय भार्या स्यामा तस्यात्मज द्वयो प्रथम पुत्र सराफ भारतसाह तस्य भार्या द्वयो प्रथम भार्या जसो दुतिय भार्या सूदरी तत्र पुत्र श्री सराफ देवजू तस्य भार्या द्वियो प्रथम भार्या गुनो दुतिय भार्या माराजो भारत सा पुत्र ३ श्री सराफ रांमचन्द्र तस्य भार्या द्वयो प्रथम भार्या तुरसो दुतिय भार्या सौना दुत्री पुत्र श्री सराफ नंन्हें तस्य भार्या अंचाई तत्र पुत्र श्री सराफ कलयानसाहा तस्य भार्या द्वयो प्रथम भार्या रमो दुतिय भार्या चिदानो प्रथसंति परगनो औरछो

नम्र टीकमगड तत्समीपे छेत्र पपौराजू मध्ये श्री जिन चैत्यालय प्रतिष्टितं ।

मंदिर ६ (श्री पार्श्वनाथ जी)

संवत् १८६० मार्ग कृष्ण दशम्यां भृगुवासरे परगनौ उड़छौ श्री महाराजकोमार श्री महाराजाधिराज महेन्द्रबहादूर बिक्रमाजीत तस्य राज्ये नम्र टीकमगड तत्समीपे छेत्र पपौराजी मध्ये.................................।

मंदिर ७ (श्री चन्द्रप्रभ जी)

संवत् १५४२ वर्षे बैसाष सुदी......(आगे ठीक पढ़ने में नहीं आता)

मंदिर ८ (श्री पार्श्वनाथ जी)

संवत् १६०३ बैसाष मासे शुक्ल पक्षे तिथौ ३ भौमवासरे परगनौ ओड़छौ नम्र टीकमगढ़ तत्समीपे पुन्य क्षेत्रे श्री मन्महा-राजाधिराज महाराज श्री सुजानसिंघ देवजू राज्य मध्ये श्री मूल संघे बलात्कार गणे सरस्वती गच्छे श्री कुंदकुंदाचार्याम्नाये बहुरिया मूरकोछल्ल गोत्रे नायक बलसींघ तस्य भार्या सुखेदी नित्यं प्रणमंति शुभं भवतु

मंदिर ६ (श्रीचन्द्रप्रभ जी)

संवत् १६४२ मार्ग मासे शुभे शुक्ल पक्षे तिथौ ३ तीज बुधे श्री मूलसंघे बलात्कारगणे सरस्वती गच्छे श्री कुंदकुंदा-चार्याम्नाये श्री पपौरा मध्ये प्रतिष्ठा करापितं भाकमूर भारल्ल गोत्र सवाई सिंगै बंदेजा कल्यानसा मौजीलाल नित्यं प्रणमंति—

मंदिर १० (श्री ऋषभनाथ जी)

संवत् १६४२ मार्ग मासे शुभे शुक्ल पक्षे तिथौ ३ बुधे

श्री मूलसंघे बलात्कारगणे सरस्वतीगच्छे श्री कुंदकुंदाचार्याम्नाये श्रीपपौरामध्ये प्रतिष्ठा करापितं बैसाखिया गोइल्ल गोत्र अजीतराम तस्य पुत्र उमराव तस्य भ्राता बिहारी तस्य आत्मज राजाराम तस्य भ्राता प्यारेलाल तस्य पुत्र मंगल नंदी हजारी गोरेलाल नित्यं प्रणमंति।

मंदिर ११ (श्री नेमिनाथ जी)

संवत् १६३६ मार्गमासे शुभे कृष्णपक्षे ८ श्री मूलसंघे बलात्कारगणे सरस्वतीगच्छे कुंदकुंदाचार्याम्नाये प्रतिष्ठा करापितं पपौरामध्ये राज्य ओड़छौ श्रीमहाधिराज सवाई श्री महेन्द्रप्रतापसिंहजू राज्यमध्ये बैसाखियामूर गोइल्ल गोत्र मुनु हेमराज व परमू भार्या लडू व नवलो व बदेती तस्य पुत्र नंदकिशोर ने प्रणमंति—

मंदिर १२ (श्री विमलनाथ जी)

संवत् १६०६ पौषमासे कृष्णपक्षे नवंम्यां शनिवासरे श्री मूलसंघे बलात्कारगणे सरस्वतीगच्छे श्रीकुंदकुंदाचार्याम्नाये परगनौ ओड़छौ श्रीक्षेत्र पपौराजू मध्ये श्री मन्महाराधिराज श्री महेन्द्रबहादुर सुजानसिंघजू देव राज्यमध्यं वाली नम टीकमगढ़ के गांगेरमूर गोहिल्लगोत्रे श्री मिठयाबुलसींग तस्य पुत्र नंदलाल दुतिय पुत्र गनेस तृतीय पुत्र सुखसींग चतुर्थ पुत्र हीरालाल नित्यं प्रणम्यतः।

मंदिर १३

(पहले लेख में आ गया है।)

मंदिर १४ (श्री पार्श्वनाथ जी)

संवत १६१६ फाल्गुनमासे शुक्लपक्षे तिथौ सप्तम्यां

बुधवासरे श्री मूलसंघे बलात्कारगणे सरस्वतीगच्छे श्री कुंद-कुंदाचार्याम्नाये श्रीमन्महाराजाधिराज श्री महेन्द्रबहादुर हमीरसींघ-राजमध्ये भारूमूर भारिल्लगौत्रे । बंदैया कल्यानस्या तस्य भार्जा बेटी बाई तस्य पुत्र मौजी तस्यभार्या ... .
. ...।

मंदिर १५

संवत् १८६२ माघमासे शुक्लपक्षे १० गुरुवासरे श्री महाराजकोमार श्रीमहाराजाधिराज श्री राजा तेजसिंह राज्य-मध्ये श्रीमूलसंघे बलात्कारगणे सरस्वतीगच्छे कुंदकुंदाचार्या-म्नाये भारूमूर भारिल्लगोत्र चंदेरामध्ये :मिंगई कडोरे भार्या तेजा द्वतीय भार्या नन्हीं कनिष्ट भ्राता मोहनलाल भार्या खुमानो नित्यं प्रणमंति ।

मंदिर १६ (श्री ऋषभनाथ जी)

संवत् १८६२ भाद्रपद्मासे शुक्लपक्षे पंचाम्यां ५ भृगुवा-सरे श्री मूलसंघे बलात्कारगणे सरस्वतीगच्छे श्री कंदकुंदाचार्या-म्नाये मलैया जोरावल भार्या चंपौ सूनौ ज्येष्ठ धुरमंगद पुत्र जानकीदास नित्यं प्रणमंति ।

मंदिर १७ (श्री ऋषभनाथ जी)

संवत् १६०० फाल्गुणमासे कृष्णपक्षे पंचम्यां ५ शुक्रवासरे नग्र टीकमगढ़ मध्ये श्री महाराजकोमार श्री महा-राधिराज श्रीमहेन्द्रबहादुर सुजानसिंह जू देव तस्य राज्य-मध्ये श्री मूलसंघे बलात्कारगणे सरस्वतीगच्छे श्रीकुंदकुंदा-चार्याम्नाये बहुरियामूर कोछल्ल गोत्र ककरैडया नंद जू तस्य गोद बालिक बंढू नित्यं प्रणमंति ।

मेरु १८ (श्री पार्श्वनाथ जी)

संवत् १८७२ वर्षे फाल्गुण मासे शुक्लपक्षे प्रतिपदायां श्रीमूलसंघे बलात्कारगणे सरस्वतीगच्छे श्रीकुंदकुंदाचार्याम्नाये परगनौ ओड़छौ नग्र टेहरी तत्समीपे श्री क्षेत्र पपौरा जी श्री नृपति विक्रमाजीत राज्ये श्री श्रावग भारुमूर भारिल्लगोत्रे श्री सिंघै बछरमन तस्य भार्या राय ········तस्यात्मज २ ज्येष्ठ पुत्र श्री सिंघै संतोषराय मद्धे लल्लू लघु पुत्र पूरनदास········ ···········सिंघै मनराषन तस्य भार्या बषत कुवर नित्यं प्रणमंतम् ।

मंदिर १६ (श्री संभवनाथ जी)

संवत् १८६२ वैसाखशुक्ल १० दशम्यां भृगुवासरे परगनौ औड़छौ क्षेत्र पपौरा श्रीमहाराज महेन्द्रबहादुर विक्रमाजीत जू तथा श्रीमहाराजाधिराज श्रीमहाराज श्री राजा तेजसिंघ जू तस्य राज्य मध्ये वैश्य वर्णे गोलालारे स्वान विहार कासिल्लगोत्र श्री मूलसंघे बलात्कारगणे सरस्वती गच्छे कुंदकुंदाचार्याम्नाये रामरतन तस्य भार्या सुरजन तयोः पुत्र मर्यादरा वधू भ्रिमो कनिष्ट भ्राता हीरानंद तस्य भार्या गंगादे मर्यादरा तस्य पुत्र माडन तस्य भार्या चनदा तस्य सूनौ प्राण सुख तस्य पत्नी रजौ पुत्र नंदकिशोर रामचन्द्र लघुभ्राता अवार तस्य भार्या गुमानो नित्यं प्रणमंतम् ।

मंदिर २० (श्री चन्द्रप्रभ जी)

संवत् १८६२ बैसाख शुक्ल १० दशम्यां भृगुवासरे परगनौ औड़छौ क्षेत्र पपौरा श्री महाराजकुमार श्रीमहाराजाधिराज श्रीमहेन्द्रबहादुर विक्रमाजीत जू तथा श्रीमहाराज

ओमार श्री महाराजाधिराज श्री राजा तेजसिंह जू राज्यमध्ये वैश्य वर्णे नारदमूर ब्राह्मल्लगोत्र श्रीमूलसंघे बलात्कारगणे सरस्वतीगच्छे श्रीकुंदकुंदाचार्याम्नाये लोंगवसं खड़ेराय भार्या बीरीबाई द्वितीय भ्राता: पातरे भार्या चिरई खाड़ेराय पुत्र खुमानसिंह ज्येष्ठ भार्या पार्वती द्वितीय भार्या गणेशी पार्वती पुत्र ज्येष्ठ मोतीलाल भार्या जराउ द्वितीय पुत्र हीरालाल भार्या हीरा तृतीय पुत्र जालम बधू गंगा नित्यं प्रणमंति।

मंदिर २१

(प्रथम लेख में आ गया है।)

मंदिर २२ (श्री नेमिनाथ जी)

संवत् १७१६ वर्षे फाल्गुणमासे कृष्णपक्षे १ शनौ श्रीभट्टारक पद्मकीर्त्ति तत्पट्टे भ० श्रीसकलकीर्त्ति-नित्यं प्रणमंति—

मंदिर २३ (गुफा लेख)

(प्रथम लेख में आ गया है।)

मंदिर २४ (श्री नेमिनाथ जी)

संवत् १६४० मार्गमासे कृष्णपक्षे पंचम्यां सोमवासरे श्रीमूलसंघे बलात्कारगणे सरस्वतीगच्छे कुंदकुंदाचार्याम्नाये राज्य ओड़छौ श्री सवाई महेन्द्रप्रतापसिंह जू राज्यमध्ये श्रीपपौरामध्ये प्रतिष्ठतं परतापगंज के सकल श्रावक नित्यं प्रणमंति।

मंदिर २५

(लेख नहीं है)

मंदिर २६ (श्री पार्श्वनाथ जी)

संवत् १८७५ चैत्रशुक्लपक्षे तिथि चतुर्दशी १४ रविवासरे श्रीमूलसंघे बलात्कार गणे सरस्वतीगच्छे श्रीकुंद-कुंदाचार्याम्नाये पड़गनौ ओड़छौ नग्र टेहरीं तत्समीपे क्षेत्र पपौरा जी नृपति विक्रमाजीत तत्र स्थाने प्रतिष्ठाकारक श्रावक पुनीत चौधरी भगवानदास तस्य भार्या कोंसा तस्यात्मज पुत्र २ ज्येष्ठ सभापति तस्य भार्या बषतो तस्यात्मज पुत्र मानिक सभापति लघु भ्रात मनेश तस्य भार्या पजो तस्यात्मज पुत्र २ ज्येष्ठ पुत्र नंदकिशोर तस्य भार्या चंपो लघु पुत्र रामप्रसाद नित्यं प्रणमंति—

मंदिर २७ (श्री पार्श्वनाथ जी)

संवत् १७७१ वर्षे फाल्गुन वदि ६ ....
श्री महाराजाधिराज श्री महाधिराज .... श्री उदेत-सिंह जू देव श्री भट्टारक धर्मकीर्ति तत्पट्टे पद्मकीर्ति देवस्तत्पट्टे सकलकीर्ति .... तत्पट्टे भट्टारक ....
कीर्तिदेव ... . ।

मंदिर २८

(लेख पढ़ने में नहीं आसका)

मंदिर २९ (श्री पार्श्वनाथ जी)

संवत् १८८८ आश्विन शुक्ला ८ अष्टम्यां शुक्रवासरे परगनौ औड़छौ राजा श्री महाराजा श्री राजाधिराज श्री महेन्द्र विक्रमाजीत जू देव तस्य राज्ये नग्र टीकमगढ़ तत्समीपे क्षेत्र पपौरा श्री मूलसंघे बलात्कारगणे सरस्वतीगच्छे श्री कुंद-कुंदाचार्याम्नाये चौधरी धुरमंगद तस्य भार्या ....

मंदिर ३० (श्री पुष्पदंत जी)

संवत् १८६६ फाल्गुनसुदी भौमे १ मूलसंघे बलात्कार-गणे सरस्वतीगच्छे श्रीकुंदकुंदाचार्याम्नाये गहिरवाल श्री नृपति बिक्रमाजीतराज्योदयात् श्री चौधरी गोरे तस्य भार्या बिटो तयो पुत्र द्वयोः ज्येष्ठ धुरमंगज तस्य भार्या रामो लघु भ्राता सबसुख तस्य भार्या तीजा चौधरी भगवानदास तस्य भार्या कौंसा तस्य पुत्र द्वयो ज्येष्ठ सभापति तस्य भार्या बदले लघु पुत्र गणेश तस्य भार्या पजो। धुरमंगज पुत्र भयोः ज्येष्ठ लछमन द्वितीय कलकन, तृतीय प्रागासुख। सबसुख पुत्र द्वयो ज्येष्ठ पुत्र प्यारेलाल द्वितीय बुधू, तृतीय हीरादास। सभापति पुत्र मानिक गणेश पुत्र द्वियो ज्येष्ठ पुत्र नंदकिशोर द्वितीय रामप्रसाद। लछमन पुत्र द्वयो ज्येष्ठ सुखलाल लघु माणिकलाल। हीरादास पुत्र जुगलकिशोर देदामूर बासल्ल गोत्र नित्यं प्रणमंति।

मंदिर ३१ (श्री पार्श्वनाथजी)

संवत् १८६४ माघमासे कृष्णपक्षे ६ बुधवासरे परगनौ ओड़छौ नग्र टीकमगढ़ क्षेत्र पपौराजी श्री महाराजाधिराज श्री महेन्द्रबहादुर श्री महाराज तेजसींह राज्यमध्ये संघाधिप-परमसुख तस्यात्मज देवज द्वतीय भ्राता सुखसींग श्री मूलसंघे बलात्कारगणे सरस्वतीगच्छे कुंदकुंदाचार्याम्नाये बहुरियामूरी कोछल्लगोत्र नित्यं प्रणमंन्त।

मंदिर ३२ (श्री चन्द्रप्रभ जी)

संवत् १८६८ वर्षे मास फाल्गुन सुदी ३ शनिवासरे उत्तरा भाद्रपदनक्षत्रे श्रीमूलसंघे बलात्कारगणे सरस्वतीगच्छे कुंदकुंदाचार्याम्नाये गहिरवाल श्री राजा बिक्रमाजीत तस्य राज्ये

वैश्यवंशे परवार बहुरियामूर कोछल्लगोत्र श्री लोडुवा परदौन-दास तस्य पुत्र द्वयो ज्येष्ठ भट्टू भार्या वारीबाई द्वतीय मासीध तस्य भार्या लालो तृतयो माखन तस्य कमलो मासीधस्य पुत्र हीरानंद तस्य भार्या नोंनी तृतीय भ्रातस्य पुत्र सिं० सभापति तस्य भार्या बाइदे सिं हीरानंदस्य पुत्र देवकीनंदन तेनेदं पुन्य प्रतिष्ठाकारक सकुटुम्ब नित्यं प्रणमंति।

मंदिर ३३ (श्री पार्श्वनाथ जी)

संवत् १८६३ आषाढमासे कृष्णपक्षे १० बुधवासरे श्री महाराज कोमार श्री महाराजाधिराज तेजसिंह जू राज्य मध्ये श्रीमूलसंघे बलात्कारगणे सरस्वतीगच्छे कुंदकुंदाचार्या-म्नाये। बहुरियामूर कोछल्लगोत्र सुनवारेवाले मोती भार्या माराजोसुनू ज्येष्ठ भ्राता कल्याणसाहि कंमोद, रामचन्द, फतई-किशोरी, छोटेलाल, कनिष्ट भ्राता प्राणसुख भार्या भिमो आत्मज जवार प्रणमंत, नाती चन्दु, विहारी, गणेश,

मंदिर मेरु ३४ (श्री पार्श्वनाथ जी)

संवत् १५४५ वर्षे बैसाख सुदी ३ (आगे ठीक पढ़ने में नहीं आता)

मंदिर ३५ (श्रीचन्द्रप्रभ जी)

संवत् १५२४ चैत्र वदी १ शुक्रवार········(आगे का भाग खंडित है।)

मंदिर ३६ (श्री पार्श्वनाथ -पद्मावती जी)

(लेख नहीं है)

मंदिर ३७ (श्री मुनिसुव्रतनाथ जी)

संवत् १८६२ भाद्रपदमासे कृष्णपक्षे १२ द्वादश्यां गुरुवासरे नग्र टीकमगढ़ मध्ये श्रीमहाराजकोमार श्रीमहाराजाधिराज श्री महेन्द्रबहादुर तेजसिंहजू राज्य मध्ये श्रीमूलसंघ बलात्कारगणे सरस्वतीगच्छे कुंदकुंदाचार्याम्नाये सि० साहिजू भार्या सन्नू पुत्रा । ज्येष्ठ बालकृष्णकान्ता नवलो बन्धू हीरा वा वृंदा तृतीय भ्राता राजाराम भार्या वृंदा कनिष्ठ भ्राता माडन कान्ता त्रियो धा माराजो सूनौ हरिप्रसाद सोनेमा नित्यं प्रणमत: ।

मंदिर ३८ (श्रीचन्द्रप्रभजी)

संवत् १८७६ अथ श्रीमान्नृपति विक्रमाजीत राज्यानगवय भाद्रपद शुक्ल पंचम्यां बुधवासरे परगनो औड़छौनग्र टेहरी तत्समीपे श्री मत् क्षेत्रपपौरामध्ये श्रीमहाराजाधिराज श्रीमहेन्द्र महाराजा श्रीराजा विक्रमाजीत तस्यात्मज श्रीमहाराजाधिराज श्रीमहेन्द्र महाराजा श्रीमन्नृपति धर्मपाल बहादुरजू........प्रवर्तमाने श्रीमूलसंघे बलात्कारगणे सरस्वतीगच्छे श्रीकुंदकुंदाचार्याम्नाये चन्द्रपुरीपट्ट भट्टारक श्रीसन्तरेन्द्रकीर्त्ति तदाम्नाये गोदूमूर गोहिल्ल गोत्र श्रीकटहा साहजू तस्य भार्या सन्तो तयो: पुत्र ३ प्रथम ज्येष्ठ पुत्र संघापित कुल दीपक बालामुकुन्द तसु भार्या............पुत्र वृन्दावन तृतीय भार्यानवलो पुत्र हीरालाल द्वितीय पुत्र श्रीराजाराम भार्या वृंदा पुत्र जोरावल तृतीय भ्रात माडन तस्य भार्या अम्मो तेभ्य: मिदं प्रतिष्ठां कारापितं, श्रीऋषभदेवो चरणकमलयो: नित्यं प्रणमंति शुभंभवतु मंगलं ददातु ।

मन्दिर ३९ (श्रीचन्द्रप्रभजी)

संवत् १८६५ वर्षे वैशाखमासे श्रीमूलसंघे बलात्कार-गणे सरस्वतीगच्छे श्रीकुंदकुंदाचार्याम्नाये श्रीजिनशास्त्रोपदेशात् श्रीजिनप्रतिमा प्रतिष्ठतम् । परगनौ श्रीवृछौ ग्राममामौन तत्समीपे क्षेत्र पपौरा श्रीनृप विक्रमाजीत राज्योदयात् जाति गोला पूर्व गोत्र वेरिया साहो उदयभाव तस्य भार्या धर्मानाम तयोः पुत्र द्वियोः ज्येष्ठ पुत्र बसन्तराय संज्ञका कनिष्ठा हंसमं तस्य भार्या बगुन्ती नाम साहु बसन्तराय तस्य भार्या कल्याणश्री तयो पुत्र अमरसाय तस्य भार्या रामकुंवर तयोः पुत्र बभौ ज्येष्ठ पुत्र नन्दकिशोर संज्ञका कनिष्ठा रामचन्द्र नित्यं प्रणमंति नवीति ।

मंदिर ४० (श्रीनेमिनाथजी)

संवत् १८९७ ज्येष्ठमासे कृष्णपक्षे पंचम्यां गुरुवासरे टीकमगढ़समीपे क्षेत्र पपौरामध्ये श्रीमन्महाराजाधिराज श्रीमहेन्द्र बहादुर श्रीराजा तेजसिंह जू राज्यमध्ये श्रीमूलसंघे बलात्कार-गणे सरस्वतीगच्छे श्रीकुंदकुंदाचार्याम्नाये बहुरियामूर कोछल्ल-गोत्र कठरया अजीतराय तस्यात्मज नाथूराम नित्यं प्रणमंतः श्री ।

मंदिर ४१ (श्रीचन्द्रप्रभजी)

(लेख नहीं है)

मंदिर ४२ (श्रीऋषभनाथजी)

संवत् १८८३ वैसाख शुक्लपक्षे तिथि अष्टम्यां सोमवासरे श्रीमूलसंघे बलात्कारगणे सरस्वतीगच्छे श्रीकुंदकुंदाचार्याम्नाये श्रीकठरया उम्मेद तस्यात्मज श्रीकठरया बाजूराव द्वितीयात्मज

श्री कठग्या अजीतराय तस्यात्मज श्रीलालानाथूराम लेनेदं नम टीकमगढ़ नगरसमीपे क्षेत्र पपौरामध्ये श्रीजिनचैत्यालये श्रीजिनप्रतिमा प्रतिष्ठतम् श्रीरस्तु कल्याणमस्तु ।

मंदिर ४३ (श्रीनेमिनाथजी)

संवत् १६०२ माघमासे शुक्लपक्षे तिथौ ६ रविवासरे श्रीमूलसंघे बलात्कारगण सरस्वतीगच्छे कुंदकुंदाचार्याम्नाये विक्रमादित्यराज्योदयात् श्रीनग टेहरी मध्ये कठग्या अजीतरा नाथूराम वैशाखिया मूरी वाछल्ल गोत्रे जिन प्रतिमा प्रतिष्ठनम ।

मंदिर ४४ - ६६ चौबीसी (श्रीऋषभनाथजी)

संवत् १६१६ वर्ष फाल्गुन मासे शुभे शुक्लपक्षे १३ रवि-वासरे परगनौ ओड़छौ श्रीमहाराजाधिराज श्रीमहेन्द्र श्रीनृपति हमीरसिंहजू देवबहादुर तस्यराज्यात् पनिष्तंपठातें श्रीक्षेत्र पपौराजीमध्ये श्रीमूलसंघे बलात्कारगणे सरस्वतीगच्छे श्रीकुंदकुंदाचार्याम्नाये इक्ष्वाकुवंशे कासिल गोत्रे नृपति गोला पूर्व वंश पडैले स० सि० बाजूराव तस्यात्मज ज्येष्ठ चन्द्रभान तस्य-लघुभ्राता राघन तस्यात्मज मर्यादराय व देवकरण व भवानी दास तस्यात्मज दौलतराम ना उद्दे त व हजारीलालजी नित्यं प्रणयतु ।

संवत् १८६० फाल्गुन सुदी पंचम्यां ५ गुरुवासरे अश्विनी नोन्ही नक्षत्रे शुक्र ता नियोगे श्रीमूलसंघे बलात्कारगणे सरस्वतीगच्छे कुंदकुंदाचार्याम्नाये श्रीजिनशास्त्रोपदेशात जिन प्रतिमाप्रतिष्ठता । ओड़छौस्थलप्रदेशे श्रीमन विक्रमादित्यस्य राज्ये वर्तमानेपवगदिर-नरौ मध्यान्तर ओकार स्वर मिलिनि

गकागन्त क्षेत्रे प्रतिष्ठतं जिनमन्दिरं गोलापूर्व पडैले गोत्रे ...
य नामक वजूराय नामाकावइ नाम्नी पत्नी सहित: ज्येष्ठा पुत्र:
चन्द्रभान संज्ञका: कनिष्ठ: राणा संज्ञका ताभ्यां सहित: पौत्र:
सथान्न संज्ञक: चन्द्रभान संघ कस्य पुत्र: भवानी संज्ञक
नित्यंप्रणमति—

मंदिर ६९ (श्री चन्द्रप्रभ जी)

श्री संवत् १६५५ फाल्गुनमासे कृष्णपक्षे तिथौ २ चन्द्र वासरे श्रीमूलसंघे बलात्कारगणे सरस्वतीगच्छे श्रीकुंद-कुंदाचार्याम्नाये पपौरामध्ये प्रतिष्ठितं टीकमगढ़ वैसाखिया गोइल्ल गोत्र कन्हैं तस्य पुत्र रज्जू नित्य प्रणमंति—

मंदिर ७० (श्री पार्श्वनाथ जी)

संवत् १८६३ पौषमासे शुक्लपक्षे ११ सोमवासरे परगनौ ओड़छौ नग्र टीकमगढ़ श्री महाराजाधिराज श्रीमहेन्द्रबहादुर श्री राजा तेजसिंह जू देव राज्यमध्ये श्रीमूलसंघे बलात्कारगणे सरस्वतीगच्छे श्रीकुंदकुंदाचार्याम्नाये रकयामूर वाभल्ल गोत्र इक्ष्वाक वंश क्षेत्र पपौराजीमध्ये नाइक नाथूराम तस्य भार्या कौंसा तस्यात्मज कल्याणमाय तस्य भार्या सरूपा नित्यं प्रणमंति ।

मंदिर ७१ (श्री पार्श्वनाथ जी)

संवत् १८८२ चैत्रशुक्लषष्ठम्यां गुरुवासरे श्रीमूलसंघे बलात्कारगणे सरस्वतीगच्छे श्रीकुंदकुंदाचार्याम्नाये श्रीनग्र टीकमगढ़ तत्समीपे क्षेत्र पपौरामध्ये श्री सिं० ठाकुरदासस्य पुत्र प्राणमुख तस्य भार्या वारीबइया मदन तस्य पुत्र खुमानसिंघ

तस्य भार्या महाराजो प्राणसुखस्य पुत्र हीरालाल तस्य भार्या पर्वती द्वितीय पुत्र शिवप्रसाद जी तस्य भार्या गंगा तेनेदं श्री जिन प्रतिमा प्रतिष्ठतं । श्रीरस्तु कल्याणमस्तु ।

मंदिर ७२ (श्री पार्श्वनाथ जी)

संवत् १८६७ फाल्गुण शुक्ल १२ गुरुवासरे श्रीमन् महाराजाधिराज श्रीमहेन्द्रबहादुर श्रीमहाराज तेजसिंह जी राज्य मध्ये श्री मूलसंघे बलात्कारगणे सरस्वतीगच्छे श्री कुंद-कुंदाचार्याम्नाये बासल्ल गोत्र डेरिया मूर मोदीकल्याणमा तस्यात्मज ज्येष्ठ पुत्र मंतिसा द्वितीय पुत्र कड़ोरे तथा तस्य भतीजे लछमनदास तस्यात्मज मोदी खाडेराव क्षेत्र पपौरामध्ये नित्यं प्रणमन्तु । श्री रस्तु ।

मंदिर ७३ (श्री ऋषभनाथ जी)

संवत् १८६३ मार्गमासे शुक्लपक्षे ५ सोमवासरे नग्र ओड़छौ को परगनो क्षेत्र पपौरा श्री महाराजाधिराज श्री महेन्द्र-बहादुर राजा तेजसिंहजी राज्यमध्ये श्रीमूलसंघे बलात्कारगणे सरस्वतीगच्छे कुंदकुंदाचार्याम्नाये सिंघई नंद जी तस्य भार्या गोदा तयो पुत्र राजाराम वा हरीसिंह ज्येष्ठ भ्रातात्मज गोविन्दास व छतारे श्री जिन प्रतिमा प्रतिष्ठतम् नित्यं प्रणमंति ।

मंदिर ७४ (श्री ऋषभनाथ जी)

संवत् १८६२ माघमासे शुक्लपक्षे ७ सोमवासरे श्री महाराजकोमार श्रीमहेन्द्रबहादुर तेजसिंह जी राज्यमध्ये श्रीमूल संघे बलात्कारगणे सरस्वतीगच्छे कुंदकुंदाचार्याम्नाये सिंघईनंद जी तस्यात्मज राजाराम द्वितीय भ्राता हरीसींह नित्यं प्रणमत् ।

मंदिर ७५ (श्री नेमिनाथ जी)

संवत् १६१६ फाल्गुनमासे शुक्लपक्षे तिथौ सप्तम्यां बुधवासरे श्री मूलसंघे बलात्कारगणे सरस्वतीगच्छे श्री कुंद-कुंदाचार्याम्नाये श्री मन्महाराजाधिराज महेन्द्रबहादुर हमीर-सिंह राज्यमध्ये परगनौ औड़छौ नग्र टीकमगढ़ तत्समीपे क्षेत्र पपौरा तन्मध्ये प्रतिष्ठतं नारद्मूर बाछल्ल गोत्रे सवाई सिंघई रामबगस तस्य भार्या देवका तस्यात्मज गंगाप्रसाद तस्य भार्या उमेदी नित्यं प्रणमताः ।

नोट—(१) मूल नायक श्रीजिन-प्रतिमा जी के ही लेख दिये गये हैं ।

(२) चौबीसी की एक जिन प्रतिमा का ही लेख दिया गया है ।

राजकुमार जैन,
मगनलाल जैन कौशल ।

विद्या-मन्दिर

[एक नवीन आयोजन]

जैन-समाज में शिक्षा-संस्थाओं की कमी नहीं है। छोटी-मोटी अनेक हैं, लेकिन उनमें से लग-भग सभी एकांगी हैं। शिक्षा का व्यापक ध्येय उनके सन्मुख नहीं है, न आस-पास की जनता से ही उनका कोई सम्बन्ध है। वर्तमान समय की आवश्यकताओं को देखते हुए ऐसी संस्था की जरूरत अनुभव होती है, जिसमें विद्यार्थियों को सुसंस्कृत वातावरण में रख कर उनके चरित्र का सर्वाङ्गीण निर्माण किया जाय तथा साहित्य-शिक्षण के साथ-साथ औद्योगिक शिक्षण के द्वारा उन्हें सफल नागरिक बनाया जाय। इसमें सन्देह नहीं कि ऐसी संस्था न केवल जैन-समाज के लिये ही उपयोगी होगी, अपितु उसका आदर्श जैनेतर-समाज की दृष्टि में भी आकर्षक और अनुकरणीय होगा।

"श्री वीर दिगम्बर जैन विद्यालय" गत पच्चीस वर्षों से कार्य कर रहा है, लेकिन उसका ध्येय अबतक जैन-समाज की अन्य संस्थाओं की भाँति ही रहा है। अब हम उसे एक आदर्श सांस्कृतिक, साहित्यिक तथा औद्योगिक 'विद्या-मन्दिर' के रूप में परिणत करने का विचार कर रहे हैं। उसकी एक व्यावहारिक रूप-रेखा नीचे दी जाती है। वह पूर्ण नहीं है और एक साथ उसे अमल में लाना भी हमारे लिये सम्भव न होगा, लेकिन धीरे-धीरे हम उसे पूर्णरूप से कार्यान्वित कर सकेंगे, ऐसा हमारा विश्वास है।

विद्या-मन्दिर की रूपरेखा

१ — सांस्कृतिक ..

(अ) जैन व जैनेतर संस्कृति का शिक्षण।

(ब) जैन व जैनेतर दर्शन का शिक्षण।

२—साहित्यिक ..

(अ) १. धर्म और न्याय-शास्त्र का शिक्षण। (आधुनिक परीक्षालयों की परीक्षाओ में सम्मिलित करते हुए छात्रो को धार्मिक व दार्शनिक प्रधान सिद्धान्तों का व्याख्यान-पद्धति द्वारा विशुद्ध बोध कराना तथा उन्हे तत्संबंधी अनुसंधान की ओर प्रवृत्त करना)।

२. संस्कृत-कालेज बनारस की परीक्षाओं के अनुसार छात्रो को व्याकरण, न्याय और साहित्य-शास्त्रि-परीक्षा तक शिक्षा देना तथा उपलब्ध जैन व जैनेतर साहित्य का तुलनात्मक अध्ययन और आलोचन।

३. प्राकृत भाषा की शिक्षा।

४. हिन्दी-शिक्षा (साहित्यरत्न, हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन प्रयाग)।

५. नागरिक-शास्त्र की शिक्षा।

६. लेखन और सम्पादन-कला की व्यावहारिक शिक्षा।

(ब) हाईस्कूल-परीक्षा (सभी आवश्यक विषय)।

३—शारीरिक शिक्षण ..

१. स्वास्थ्य-विज्ञान। २. लाठी इत्यादि चलाने की शिक्षा।

४—औद्योगिक ..

१. आधुनिक व्यापार-शास्त्र।

२. कागज,साबुन,स्याही बनाना तथा सूत कातने की शिक्षा।

३. शार्ट-हैन्ड और टाइप-राइटिंग की शिक्षा।

पपौरा }

सञ्चालक कमेटी—
श्री वीर दि० जैन विद्यालय,

पपौरा-क्षेत्र

(विद्या-मन्दिर की रूपरेखा)

श्री ब्यौहार राजेन्द्रसिंह एम० एल० ए०

पपौरा सरीखे पवित्र क्षेत्र में 'विद्या-मन्दिर' की स्थापना मणिकाञ्चन योग के समान है। कालिदास ने भी कहा है—'रत्नं समागच्छतु काञ्चनेन।'

मेरे विचार से इस विद्या-मन्दिर को सांस्कृतिक, साहित्यिक तथा औद्योगिक बनाने का विचार उपादेय है। सांस्कृतिक शिक्षण जबतक साहित्य के साथ सम्बद्ध न हो तब तक सरस नहीं हो सकता और साहित्यिक शिक्षण जबतक औद्योगिक शिक्षा के साथ समन्वित न हो, वह क्रियात्मक नहीं हो सकता। तीनों की समान आवश्यकता इसलिये है, जिसमें मस्तिष्क, हृदय और शरीर में समतोल बना रहे। सांस्कृतिक और दार्शनिक शिक्षा से यदि मस्तिष्क ज्ञान-सम्पन्न और परिष्कृत होगा तो साहित्य से हृदय शुद्ध और उन्नत होगा। उसी प्रकार औद्योगिक शिक्षा से शरीर परिपुष्ट और कार्यक्षम बनेगा। ज्ञानार्जन के साथ जीविकोपार्जन का प्रश्न भी हल होगा, जो कि वर्तमान समय मे परमावश्यक हो गया है।

भारतीय संस्कृति को अच्छी तरह हृदयङ्गम करने के लिये संस्कृत, पाली तथा अर्धमागधी के अध्ययन की बहुत आवश्यकता है, जिनमें हमारे आर्य धर्मों (हिन्दू, बौद्ध और जैन) का साहित्य भरा पड़ा है। इन धर्मों के साथ वर्तमान अन्य धर्मों के सिद्धान्तो का ज्ञान देना भी आवश्यक होगा। केवल

ज्ञान ही नहीं, किन्तु इनके तुलनात्मक अध्ययन का भी प्रबन्ध होना चाहिये, जिससे आपसी सद्भाव और प्रेम बढ़ सके। भारतीय धर्मों की एकता विश्व की एक-सूत्रता का प्रारम्भिक अध्याय होगा। सब धर्मों को भारतभूमि में एकत्रित करने का ईश्वरीय उद्देश्य यही है कि वे विश्व को सर्व-समन्वय का एक नया सन्देश दे सकें।

साहित्य की उन्नति के लिये भी प्राचीन भाषाओं का अध्ययन आवश्यक होगा ; क्योंकि वर्तमान भाषाओं की जननी वे ही हैं। साथ ही देशी भाषाओं के साहित्यों का भी ज्ञान भारतीय एकता के लिये परमावश्यक है, अतः मातृभाषा के अतिरिक्त एक देशी भाषा जानना प्रत्येक विद्यार्थी के लिये आवश्यक होना चाहिये। प्राचीन हिन्दी-साहित्य के साथ ही वर्तमान हिन्दी साहित्य के अध्ययन की भी आवश्यकता है, जिससे विद्यार्थीगण वर्तमान समय की प्रवृत्तियों के साथ रह सकें। समयानुकूल रहने के लिये नागरिकशास्त्र और उच्च कक्षाओं में राजनीति--शास्त्र पढ़ाने की भी अत्यन्त आवश्यकता है, किन्तु राजनीति में किसी खास दल की राजनीति न होकर राजनैतिक सिद्धान्तों का ही अध्ययन होना चाहिये।

शारीरिक शिक्षा, कृषि और उद्योगों की क्रियात्मक शिक्षा के साथ ही चल सकती है। विद्यालय के साथ उद्यान और कृषि-क्षेत्र अवश्य रहें, जिसमें मानसिक श्रम से थके हुए विद्यार्थी तरोताजा हो सकें। रस्किन पढ़ने--लिखने के बाद खेतों में कुदाल चलाकर अपने श्रम को दूर करता था। उद्यान में मनोरञ्जन के साथ उत्पादन भी होगा। कृषि में शिक्षा के साथ स्वास्थ्य-सुधार भी होगा। चर्खा आदि उद्योगों से वस्त्र की समस्या हल होगी

और रस्सी, बटन, साबुन-साजी आदि गृह-उद्योगों से वर्तमान आर्थिक समस्या भी सुलझेगी।

शिक्षा का माध्यम तो अवश्य ही मातृभाषा हिन्दी ही रहेगी, किन्तु अंग्रेजी भाषा एक ऐच्छिक विषय के रूप में पढ़ाई जाना आवश्यक होगा। इसी के साथ टाइपिंग आदि की क्रियात्मक शिक्षा का प्रबन्ध कर विद्यार्थी को स्वावलम्बी बनाया जा सकता है।

प्रान्त के भूगोल और इतिहास का परिचय भी विद्यार्थियों को होना आवश्यक है, जिससे उनमें प्रान्त-प्रेम तथा प्राचीन गौरव जाग्रत हो सके। भूगोल, इतिहास का पठन-पाठन इस सरलता से किया जावे कि वह भार-स्वरूप या तोता-रटन्त न होकर दिलचस्पी और आत्म-गौरव उत्पन्न करें। अङ्कगणित का ज्ञान तो व्यापार और व्यवहार के लिये आवश्यक होगा ही, किन्तु रेखागणित और बीज-गणित की उतनी आवश्यकता नहीं।

शिक्षा-क्रम में भी आवश्यक है—शिक्षकों का व्यक्तित्व और आचरण। उसे ध्यान में रखकर उनका चुनाव किया जाना आवश्यक होगा। शिक्षक-विद्यार्थी में गुरु-शिष्य का प्रेम-सम्बन्ध स्थापित हो, यही हमारा आदर्श होना चाहिये।

मेरी कामना है कि यह 'विद्या-मन्दिर' बुन्देलखण्ड की एक आदर्श संस्था हो और इसका सूत्रपात शीघ्र ही किया जावे।

जबलपुर]

शिक्षा का लक्ष्य

पं० महेन्द्रकुमार जैन न्यायाचार्य

आज हमारी शिक्षा का कोई लक्ष्य ही नहीं है। किसने, क्यों और कैसे इस शिक्षा-चक्र को चलाया और क्यों वह चल रहा है, इसकी ओर हमारे शिक्षा-शास्त्री बहुत कम ध्यान देते हैं। खास कर जैन-संस्थाओं का शिक्षण तो अनेक दृष्टियों से युगातीत हो गया है। किसी भी शिक्षा-संस्था के सञ्चालक से पूछिए कि आप यह संस्था क्यों चला रहे हैं? तो आपको तुरन्त उत्तर मिलेगा कि इसमें पढ़ कर छात्रगण 'आत्म कल्याण' कर सकेंगे। लेकिन पढ़ने वालों से पूछिए तो मालूम होगा कि उनमें से हजार पीछे एक भी शायद ही आत्म-कल्याण की भावना से शिक्षा प्राप्त करता हो। भारतवर्ष में कुछ ऐसे शब्द प्रचलित हैं, जिनका अर्थ स्वयं प्रयोग करने वाले व्यक्ति भी कम समझते हैं। ऐसे ही शब्दों में आध्यात्मिकता, आत्म-कल्याण, संस्कृति-संरक्षण और परलोक-साधन आदि हैं। और इन शब्दों का निरन्तर प्रयोग आजकल वे लोग ही करने लगे हैं जो इनकी आड़ में अपने स्वार्थ सीधा करना चाहते हैं।

आवश्यकता इस बात की है कि हम लोग शिक्षा का लक्ष्य परलोक सुधारने की जगह इस लोक को सुधारने का बनायें।

इस अर्थ-युग में मनुष्य के सामने खाने-कपड़े का इतना जटिल प्रश्न है कि उसके सुलझाते-सुलझाते ही उसका जीवन समाप्त हो जाता है।

भारत में साधारणतः मनुष्य पचास-साठ वर्ष तक जीवित रहता है। इसी उम्र में उसे अपनी जीवन-लीला समाप्त करनी पड़ती है। मेरे विचार से बीस वर्ष की अवस्था में बालक की शिक्षा समाप्त कर देनी चाहिए।

आठ वर्ष की अवस्था से बीस वर्ष तक का समय शिक्षा के लिए पर्याप्त है। इतने काल में ही उसे शारीरिक, मानसिक और सामाजिक हर दृष्टि से परिपूर्ण बनाने का प्रयत्न होना चाहिए। उपनिषत्कालीन ऋषिओं ने कहा है—"प्राणी जन्म से ही पितृऋण, ऋषिऋण और देवऋण, इन तीनों ऋणों को लेकर उत्पन्न होता है। योग्य सन्तान उत्पन्न करके पितृ-ऋण से, विद्याराधन और विद्या-प्रचार द्वारा ऋषिऋण से तथा यज्ञ-पूजा आदि द्वारा देवऋण से मुक्त होता है।" इन वाक्यों में शिक्षा का लक्ष्य तथा मनुष्य-जीवन के ध्येय की रूपरेखा खींच दी गई है। योग्य सन्तति उत्पन्न करना और उसे प्रत्येक दृष्टि से परिपूर्ण और समर्थ बनाने के लिए यह आवश्यक है कि व्यक्ति स्वयं शारीरिक, मानसिक और आर्थिक दृष्टि से समर्थ बने।

शिक्षा-शास्त्रियों का कर्तव्य है कि वे बच्चों का एक युग ऐसी शिक्षा के देने में लगाएँ, जिससे वे स्वावलम्बी होकर भली-प्रकार अपना जीवन-यापन कर सकें और साथ ही एक उपयोगी नागरिक बन कर अपने कर्तव्य का पालन कर सकें।

जैन-ज्ञान-पीठ, बनारस]

क्या पपौरा दयालबाग़ नहीं बन सकता ?

श्री परमेष्ठीदास जी जैन न्यायतीर्थ

आज की अनेक जटिल समस्याओं में शिक्षा की समस्या भी एक है। इस पर काफ़ी लिखा जा चुका है, फिर भी वह अभी सुलझती दिखाई नहीं देती। इसका कारण यह है कि हम जैनाचार्यों द्वारा निर्दिष्ट द्रव्य, क्षेत्र, काल और भाव का विचार करके काम नहीं करते।

जैन-समाज मे अनेक शिक्षा-संस्थाएं हैं। उनमें बीसो अग्रगण्य विद्वान् शिक्षक हैं और वहाँ से प्रति-वर्ष कई सौ विद्यार्थी पढ़ कर निकलते हैं, मगर उनमें से अधिकांश नूतन विद्वान् संस्था से बाहर निकल कर निराधार से दिखाई देते हैं। उन्हें सूझ नहीं पड़ता कि कहाँ जायें और क्या करें ? उनके जीवन-निर्वाह के लिए कई वर्ष तक पढ़ा गया धर्म, व्याकरण, न्याय और काव्य काम नहीं देता। वे बेचारे नौकरी की खोज में मारे-मारे फिरते हैं।

यदि उन्हें जीवन--निर्वाहोपयोगी कुछ शिक्षा भी दी गई होती तो उनका धर्म, न्याय और व्याकरणादि का सारा ज्ञान खिल उठता तथा जीविका भी सुगमता से चल जाती। कुछ विद्यालयों में थोड़े--बहुत प्रयोग इस ओर हुए हैं, मगर वे असफल ही रहे। इसका कारण है शहरी दूषित वातावरण, जहाँ हस्तकला के कार्य सीखने में विद्यार्थी लज्जा का-सा अनुभव करते हैं।

इसके लिए तो पपौरा जैसा स्थान चाहिये। जिन्होंने पपौरा जी के एकबार भी दर्शन किये हैं, वे वहाँ के सौन्दर्य

को कभी नहीं भूल सकते। वहाँ पर कई वर्ष से एक विद्यालय चल रहा है, मगर यह भी वैसा ही है, जैसे अन्य विद्यालय। साहित्याचार्य पं० राजकुमार जी ने कुछ समय पूर्व यह आन्दोलन प्रारम्भ किया था कि पपौरा विद्यालय एक आदर्श औद्योगिक विद्यालय बन जाय।

यदि प्रयत्न किया जाय तो पपौरा क्षेत्र शिक्षा का एक आदर्श केन्द्र बन सकता है। पपौरा बुन्देलखण्ड के एक अच्छे राज्य (टीकमगढ़) के अन्तर्गत है। राज्य की रुचि भी औद्योगिक कलाओं की ओर है। कुछ वर्ष से वहाँ पं० बनारसीदास जी चतुर्वेदी रह रहे हैं। इसलिए वहाँ का वातावरण और भी अधिक अनुकूल हो गया है। माननीय चतुर्वेदी जी पपौरा को भारत के गौरवशाली धर्मक्षेत्र और कर्म (औद्योगिक) क्षेत्र के रूप में देखना चाहते हैं। जिस दिन यह ऐसा बन जायगा वह दिन कितना अच्छा होगा।

पपौरा में गगनचुम्बी ७५ प्राचीन भव्य जिनालय हैं। शहर से दूर वन के पवित्र वातावरण में यह धर्म-क्षेत्र है। वहाँ पहुँचने पर बहुत शान्ति मिलती है। एक विशाल कोट के भीतर जिनालय और विद्यालय हैं। चारों ओर काफी जमीन पड़ी है। स्थान की कोई कमी नहीं है।

यदि इस सुन्दर स्थान पर धर्म-विद्यालय के साथ ही औद्योगिक विद्यालय भी खोल दिया जाय तो भारतीय शिक्षा-संस्थाओं के सामने एक आदर्श उपस्थित हो जाय। सोचता हूँ कि क्या एक दिन पपौरा क्षेत्र आगरे का 'दयालबाग' नहीं बन सकता ?

अधिक नहीं तो कम-से-कम कुछ खेती का काम ही वहाँ प्रारम्भ कर दिया जाय। हमारे विद्यार्थी वस्त्रकला को सीखें। अनेक प्रकार के वृक्ष भी लगाये जा सकते हैं। कपास बोने से लेकर कताई-बुनाई तक का एक जबर्दस्त उद्योग वहाँ चालू हो सकता है। इस उद्योग से हमारी संस्था बन जायगी और बड़े पैमाने पर खेती होने पर वह अपने प्रान्त तथा बाहर के लिए भी वस्त्र दे सकेगी। जिस दिन पपौरा जी में सैकड़ों विद्यार्थी कपास बोयेंगे, रुई धुनेंगे, सूत कातेंगे और खादी बुनेंगे उस दिन का वातावरण कितना पवित्र, कितना मनोहर, कितना रुचिकर होगा, इसकी कल्पना कीजिए।

खेती तथा वस्त्र-उत्पादन के साथ ही रुई, मिट्टी आदि के विविध प्रकार के खिलौने बनाना भी सिखाया जा सकता है, जिससे विद्यार्थी इस कला में निपुण होकर मजे के साथ अपना जीवन निर्वाह कर सकता है। इनके अतिरिक्त अन्य उद्योग सरलता से सिखाये जा सकते हैं। स्याही, साबुन, चित्रकारी और कागज बनाने का काम बहुत कठिन नहीं है। न इनमें अधिक पूँजी का ही काम है। कम-से-कम यदि इतने काम सिखाये जा सके तो मेरा विश्वास है कि पपौरा का विद्यालय जैन-समाज का ही नहीं, किन्तु अखिल भारतीय समाज की एक आदर्श संस्था बन जाय।

पपौरा विद्यालय के कार्यकर्ता और अधिकारीगण इधर शीघ्र ही ध्यान दें। श्रद्धेय चतुर्वेदी जी जैसे विद्वान् का सहयोग एक महान् अशीर्वाद से बढ़कर सिद्ध होगा। मेरा तो विश्वास है कि यदि इस ओर क्रियात्मक प्रयत्न किया जाय तो पाँच वर्ष में ही पपौरा क्षेत्र 'दयाल बाग' बन जायगा।

चन्दाबाड़ी, सूरत।] ———

विद्या-मन्दिर : एक आदर्श योजना

पं० तुलसीराम जी काव्यतीर्थ

यह निर्विवाद सत्य है कि किसी भी धर्म, समाज और देश का अभ्युदय एवं उन्नति उस समाज की प्रगतिशील और सामयिक शिक्षा पर अवलम्बित है। पपौरा विद्यालय ने गत पच्चीस वर्षों मे उपलब्ध साधनों द्वारा सामाजिक शिक्षा की प्रगति में जो सफलता प्राप्त की है, वह कम महत्त्व-पूर्ण नहीं है। अब इसके उत्साही कार्यकर्त्ताओं ने शिक्षा की दिशा में जो एक क्रान्तिकारी योजना का उपक्रम किया है, उसकी सफलता के लिए समाज का हार्दिक सहयोग और सक्रिय सहानुभूति वांछनीय है।

प्रस्तुत योजना में सांस्कृतिक, साहित्यिक, शारीरिक और औद्योगिक शिक्षा को विशेष महत्त्व दिया गया है। हमारा विश्वास है कि इस योजना मे उन समस्त विषयो का समावेश है, जिनमें धार्मिक, सामाजिक और राष्ट्रीय उन्नति के प्रायः सम्पूर्ण बीज सन्निहित हैं।

पपौरा की पावन भूमि एक विलक्षण ऐतिहासिक महत्ता रखती है। वहाँ के ७५ विशालकाय भव्य जिन-भवन उसके अतीत गौरव के अप्रतिम प्रतीक हैं। वहाँ का प्रत्येक रजःकण ७५ गज रथ–पंचकल्याणक जिन–बिम्ब-प्रतिष्ठाओं से पवित्र है। पपौरा सुदूर पूर्वकाल से ही अनेक सद्गृहस्थों की धार्मिक प्रभावनाओं का लीला-भूमि रहा है। इसके साथ ही आज भी उसके निकट प्राकृतिक सौन्दर्य का अद्भुत भण्डार बिखरा हुआ है।

ऐसी पुण्यस्थली में स्वर्गीय पं० मोतीलाल जी वर्णी ने "वीर विद्यालय" की स्थापना की और इसके लिए अपना तन, मन, धन---सर्वस्व अर्पित कर दिया। उन्होंने इस विद्यालय रूपी कल्पवृक्ष का बड़े प्रयत्न के साथ सिंचन करते हुए इसे अंकुरित, पल्लवित, पुष्पित और फलित किया। इस विद्यालय के लिए यह सौभाग्य की वस्तु है कि जैन-समाज की आदर्श विभूति श्रद्धेय बाबा गणेशप्रसाद जी का इसकी स्थापना में बड़ा ही महत्त्वपूर्ण हाथ रहा है और आज भी इसकी सर्वतोमुखी उपयोगिता उनके ध्यान में बराबर बनी रहती है।

मैं समाज का ध्यान विद्या-मन्दिर-आयोजना की ओर विशेष रीति से आकृष्ट करता हूँ और चाहता हूँ कि इसे सफल बनाने के लिए समाज अपना पूर्ण सहयोग प्रदान करे तथा इसके कार्यकर्त्ताओं को प्रोत्साहन और प्रेरणा दे।

बुन्देलखण्ड की धर्म-प्राणता से आबाल-वृद्ध परिचित हैं। अब यह वहाँ के श्रीमानों की परीक्षा का समय है। जैन-मन्दिरों के निर्माण में अपनी अभिरुचि का प्रमाण वे पूर्ण रूप से दे चुके हैं। अब जिन-वाणी के उद्धार के लिए शिक्षा-मन्दिरों के निर्माण का अवसर है। द्रव्य, क्षेत्र, काल और भाव का भी वर्तमान में यही मूक सन्देश है।

सौभाग्य की बात है कि इस समय बुन्देलखण्ड में संस्कृत के विद्वानों की काफी प्रचुरता है और वे प्रायः भारत के कोने-कोने में कार्य कर रहे हैं। इन समस्त विद्वानों की सेवा में मेरा विनम्र निवेदन है कि वे अपने प्रान्त के उद्धार के लिए

इस संस्था की प्रस्तुत आयोजना को सफल बनाने में अपना हर तरह का सहयोग प्रदान करें।

मुझे यह लिखते हुए अत्यन्त हर्ष होता है कि प्रस्तुत आयोजना के अन्तर्गत औद्योगिक विभाग के सञ्चालन का भार इन्दौर के प्रसिद्ध श्रीमान् दानवीर,(रा० ब० सेठ हीरालालजी तथा जाति-भूषण सेठ गेंदालाल जी सूरजमल जी बड़जात्या ने १००) तथा ५०) मासिक सहायता स्वीकार करते हुए दो बरस तक के लिये उठाने का अनुग्रह किया है, आशा है, समाज के अन्य श्रीमान् भी इस आदर्श पद्धति का अनुसरण करेंगे।

अन्त में विद्यालय के वर्तमान मन्त्री श्री पं० खुशीलालजी भदौरा वालों से भी मेरा अनुरोध है कि वे अपने स्वर्गीय पिता की तरह ही इस विद्यालय की हित-चिन्ता करते हुए इसे अविलम्ब एक सर्वोपयोगी संस्था बनाने में प्रयत्नशील हों।

जैन कालेज, बड़ौत।]

विद्या-मंदिर की कठिनाइयाँ

श्री पं० देवकीनन्दन जी सिद्धान्तशास्त्री

संचालक-कमेटी ने जो स्कीम उपस्थित की है, वह आकर्षक है। यदि ऐसी चीज़ बन जाय तो वास्तव में उपयोगी शिक्षा का प्रसार हो जाय, परन्तु मेरे अनुभव से ऐसी चीज़ बनने के लिये दाता, सामग्री, और संयोजकों की बहुत कमी है। उसके लिये साधन-सामग्री चाहिये। वह पपौरा के आस-पास नहीं है। वह तो एकान्त, सुरम्य, पवित्र वातावरण का स्थान है। गुरुकुल अथवा विद्यालय के लिए जितना उपयोगी है, उतना औद्योगिक संस्थाओं के लिए नहीं।

दाताओं की रुचि, समाज-निर्माण के कार्यों में दान देने की ओर बहुत कम है। उनमें इस प्रकार की भावनाएँ जरूर उदित होती हैं, परन्तु स्थान-मोह आदि की अड़चनें उनके दानान्तराय के उदय की पोषक बन जाती हैं।

कमेटी के सब सदस्यों से मेरा परिचय नहीं है। जिनसे है, वे कार्यकर्त्ता यदि इसके योग्य हुए तो सम्भव है, वे अपने अलौकिक पुरुषार्थ से सफलता पा सकें।

महावीर-ब्रह्मचर्याश्रम, कारंजा।]

पपौरा विद्यालय

श्री सुमेरचन्द्र दिवाकर बी० ए०, एल-एल० बी०

मैं पपौरा तीन बार गया, मन्दिरों की वन्दना की, किन्तु विद्यालय का सम्यक् प्रकार, निरीक्षण एक बार भी न कर पाया। अस्तु, विद्यालय की अवस्था अच्छी है, इसका अनुमान उसके सुंदर परीक्षाफल से प्रत्येक व्यक्ति कर सकता है।

अच्छी संस्था के लिये, खासकर संस्कृति-रक्षक संस्था के लिये तपोवन सदृश शुभ वातावरण भी महत्वपूर्ण है। पपौरा का वातावरण सर्व प्रकार से भव्य तथा प्रभावक है।

दूसरी बात जो पपौरा को अनायास प्राप्त है, वह है अच्छी स्टेट की अधीनता। ओरछा के महाराज श्री वीरसिंहजू देव की शिक्षा के प्रति अच्छी आसक्ति सुनी जाती है।

धन-धान्यादि की कीमत भी पपौरा में अन्य स्थानों की अपेक्षा काफी कम है। अतः अल्प व्यय में छात्रों का बराबर भरण-पोषण हो सकता है।

आसपास के गाँवों में जैन-समाज के सैकड़ो बच्चे शिक्षा के लिये उत्कंठित बैठे हैं। इस प्रकार सभी दृष्टिसे समुन्नत संस्था-संचालन की पर्याप्त सामग्री पपौरा में है।

यदि समाज की सहायता से संस्था की आर्थिक समस्या सुलझ जाय तो पपौरा विद्यालय के द्वारा समाज का और भी अधिक हित होगा। आशा है, समाज इस विद्यामन्दिर के संवर्धन में समुचित सहायता देगा।

सिवनी]

जैन-शिक्षा-संस्था के आदर्श

श्री जैनेन्द्रकुमार

जैन शिक्षा-संस्था के आदर्श के संबंध में मेरे मन में ये बातें उठती हैं :—

१—संस्था के साथ 'जैन' विशेषण का उपयोग इस अर्थ में नहीं हो सकता कि जैनेतरों को उस संस्था का लाभ न पहुँचे, अर्थात् उस संस्था में प्रवेश सब बालकों के लिये खुला होना चाहिये।

२—फिर भी संस्था इस अर्थ में 'जैन' हो सकती है कि उसका भार जैन लोग ही उठायें और जैनेतरों से उसके लिये दान न माँगा जाय।

३—जैनेतर कुटुम्ब के बालकों को लेकर संस्था का यह कर्तव्य हो जाता है कि वह उन्हें उनकी परम्पराओं से विच्छिन्न न करे और उनके जीवन में धर्म-परिवर्तन की आवश्यकता उपस्थित न होने दे।

४—इस दृष्टि से विद्यार्थियों के लिये वही आचार सामान्यतया अनिवार्य रक्खा जाय जो सबको मान्य हो और असाम्प्रदायिक हो।

५—धर्म अनिवार्य वस्तु है, किन्तु अध्यापन द्वारा धर्म का दान नहीं दिया जा सकता। वह वस्तु तो संस्था के वातावरण में व्याप्त होनी चाहिये। संस्था का केन्द्रस्थ व्यक्ति धर्म-भावना से भीगा होना चाहिये। धर्म एक विषय के तौर पर

अमुक घण्टों में पढ़ाया जाय, इससे इष्ट--सिद्धि नहीं होती। उचित यह होगा कि सामूहिक तौर पर प्रवचन और कथा-वाचन द्वारा धर्म--भावना विद्यार्थियों में भरी जाय। धार्मिक वृत्ति को जीवन से ही प्रेरणा मिलती है और पुस्तकों द्वारा, विशेषकर छोटी कक्षाओं में, धर्मज्ञान का अभ्यास आगे जाकर धर्म के प्रति विमुखता पैदा करता देखा जाता है। मेरी प्रतीत है कि अठारह वर्ष की अवस्था से ऊपर धर्म-शास्त्र को वैकल्पिक विषय के तौर पर पाठ्य-क्रम में रक्खा जा सकता है, पहले नहीं।

६—शिक्षा का ध्येय मुक्ति है—' साविद्या या विमुक्तये '। मुक्ति को विशेष आध्यात्मिक अर्थ में ने की आवश्यकता नहीं। व्यक्ति अपनी परिस्थितियों से अपने को बँधा अनुभव करता है। जीवन-सामर्थ्य यह है कि परिस्थितियो से व्यक्ति जूझे और उनसे ऊपर उठे। यह सामर्थ्य आदर्श शिक्षा-संस्था से विद्यार्थी को प्राप्त होनी चाहिये।

७—इस सामर्थ्य के तीन अङ्ग मैं मानता हूँ। आर्थिक स्वावलम्बन, नागरिक सहयोग, निर्माण अथवा सृजन-स्फूर्ति।

८—अर्थकरी विद्या अनिवार्य ही है। उसके लिए भिन्न-भिन्न उद्योगों की शिक्षा की व्यवस्था होनी चाहिये। तत्सम्बन्धी सैद्धान्तिक शिक्षा तो साथ चलेगी ही। उद्योगों में प्राथमिक उद्योग—जैसे, कृषि, गोपालन, बुनाई आदि से आरम्भ करना उचित होगा। बारीक और नफ़ीस शिल्प का पीछे से प्रवेश कराया जा सकता है।

९—नागरिक सहयोग किसी भी उत्पादक श्रम को आजीविका के रूप में परिणत करने के लिये अनिवार्य है। इसमें नागरिकशास्त्र, समाज-शास्त्र, अर्थशास्त्र, राजनीति, इतिहास

आदि की शिक्षा समा जाती है। इसके व्यावहारिक रूप का भी विकास संस्था में होना चाहिये। विद्यार्थियों को परस्पर यथा-वश्यक प्रयोजनों के लिये सहयोग में बँधकर काम चलाने का अभ्यास कराना चाहिये। इसमें हिसाब, बही-खाता आदि का ज्ञान सहज भाव से होगा और उनमें सार्वजनिक कार्य-कुशलता का भी विकास होगा। परिपूर्ण सामाजिकता की ओर इस प्रकार गति करने की सूझ विद्यार्थी में पैदा होगी और वह उपयोगी नागरिक बन सकेगा।

१०–अन्तिम है सृजन-शक्ति। इसको व्यक्तित्व का स्फुरण कहना चाहिये। इसकी बाकायदा शिक्षा तो नहीं हो सकेगी, पर प्रोत्साहन द्वारा उसको पनपाया जा सकता है। नव-निर्माण की शक्ति आवश्यक ही है। वैसी सुविधा और वातावरण संस्था को प्रदान करना चाहिए। इसमें कलाएँ, विज्ञान-सम्बन्धी आविष्कार और खोज के विभाग आ जाते हैं। स्वावलम्बी और सहयोगभावी नागरिक बनने पर भी व्यक्ति में निर्मातृ-शक्ति की आवश्यकता है, जिससे वह भविष्य की दिशा में गति करने में सहायक हो।

कुछ ये विचार मेरे मन में उठते रहे हैं। इनको फैलाकर और स्पष्ट और निश्चित कर लेना होगा। उनको पूरी तरह रेखाओं में बाँधकर देना इस समय मेरे लिये जरूरी भी नहीं है, सम्भव भी नहीं है। संस्था में बैठने वाले लोग नित्य-प्रति की परिस्थितियों के साथ-साथ इसको उत्तरोत्तर व्यावहारिक और स्पष्ट बनाये जा सकते हैं। मुख्य बात भावना की है। भावना शिक्षा में सेवाभावी, सतेज, स्वावलम्बी, श्रमशील नागरिकों का निर्माण करने की होनी चाहिये। आज तो वह नहीं है। सरकारी या सरकार की सहायता से चलने वाली

संस्थाएं विद्यार्थियों के जीवन-विकास की दृष्टि से नहीं चलाई जाती हैं। सरकारी नीति से अलग होकर चलने वाली संस्था के सामने बाधायें भी बहुत हैं। उसके अलाभ भी अनेक हैं। मान और प्रतिष्ठा और ओहदा उससे नहीं मिल पायेंगे। इन लाभों से विमुख होकर चलने वाले कितने बालक या उनके अभिभावक मिलेंगे? इसलिये ऐसी स्वतन्त्र संस्था के निर्माण में बहुत सोच-समझकर बढ़ने की आवश्यता है। जहाँ तक हो, यह प्रयोग न किया जाय तो अच्छा। प्रयोग हो ही तो पूर्ण श्रद्धा-वान और कर्मवान पुरुषों द्वारा।

इसके बाद जो संस्था सरकारी नीति से स्वतन्त्र होने के साथ 'जैन' भी हो, उसका खतरा और बढ़ जाता है। यदि कहीं वह साम्प्रदायिक होगई तो वहाँ से निकले हुए विद्यार्थियों के उपयोग का क्षेत्र सीमित हो जायगा। जैन पंडित उत्पन्न करने वाली संस्था अपने विद्यार्थियों की संभावनाओं को कुंठित ही करेगी। इस तरह जैन संस्था, जिसकी शिक्षा–नीति सामान्य से भिन्न हो और सरकार से स्वतन्त्र हो ऐसी संस्था का आरम्भ करने में बहुत सोच–विचार की जरूरत है। मैं उस बारे में जल्दी करने की सलाह न दूंगा।

७, दरियागंज]

———

पपौरा विद्यालय की भावी शिक्षा-पद्धति

पं० कैलाशचन्द्र सिद्धान्तशास्त्री

वर्तमान में पपौरा के 'वीर विद्यालय' में संस्कृत की शिक्षा दी जाती है। संस्कृत में साहित्य, व्याकरण, दर्शन और धर्म का अध्ययन कराया जाता है। अध्ययन करके छात्र सरकारी और सामाजिक परीक्षालयों में परीक्षा देते हैं और संस्कृत के विद्वान् बनकर जैन-समाज में कहीं अध्यापक हो जाते हैं। यद्यपि संस्कृत विद्यालयों में उन दोषों का प्रवेश नहीं हो सका है, जो अँग्रेजी के स्कूल और कालेजों में अपना आधिपत्य जमा चुके हैं, तथापि केवल संस्कृत की शिक्षा आज के जीवन के लिये उपयोगी नहीं है। उनका प्रकाण्ड विद्वान् भी काव्य-शास्त्र और दर्शन-शास्त्र की गंभीर गुत्थियों को सुलझा सकने की क्षमता रखते हुए भी व्यावहारिक जीवन की गुत्थियों को सुलझाने में अक्षम ही रहता है। उसका क्षेत्र संकुचित हो जाता है। अपने उसी संकुचित क्षेत्र में रहकर उसे अपना जीवन-यापन करना पड़ता है। आजकल की दुनिया और उसके विधि-विधानों से वह अपरिचित रहता है। इतना भी नहीं जानता कि एक नागरिक के नाते उसके क्या अधिकार हैं। या जिस देश में उसने जन्म लिया है, उस पर क्या बीत रही है। सारांश यह कि उसकी शिक्षा एकांगी है। उसे सर्वाङ्गपूर्ण बनाने की आवश्यकता है, अतः संस्कृत-शिक्षा के साथ आवश्यक इतर विषयों की भी शिक्षा का समावेश किया जाना चाहिये।

मेरे विचार से विद्यालय में दो विभाग होने चाहिये–प्राथमिक विभाग और माध्यमिक विभाग। प्राथमिक विभाग में कम-से-कम आठ वर्ष का वह बालक लिया जाना चाहिये, जिसे प्राइमरी स्कूल की 'ब' कक्षा के जितना ज्ञान हो। प्राथमिक विभाग का पाठ्यक्रम छः वर्ष का और माध्यमिक विभाग का पाठ्यक्रम चार वर्ष का होना चाहिये। प्राथमिक विभाग के छः वर्ष मे शिक्षार्थी को हिन्दी, इतिहास, गणित और भूगोल के शिक्षण के साथ बम्बई जैन परीक्षालय की 'धर्म-प्रवेशिका' तथा ग० संस्कृत कालेज, काशी की प्रथमा-परीक्षा पास करा देना चाहिये। इसके साथ ही अँग्रेजी का प्राथमिक ज्ञान भी हो जाना चाहिये। यह शिक्षा सबके लिये अनिवार्य हो। उसके बाद जो छात्र आगे पढ़ना चाहे, उसे माध्यमिक विभाग में भर्ती किया जाय।

माध्यमिक विभाग के तीन उप-विभाग हों। अँग्रेजी-विभाग, संस्कृत-विभाग और औद्योगिक विभाग। जो छात्र अँग्रेजी पढ़ना चाहते हों, उन्हें किसी एक उद्योग की शिक्षा के साथ-साथ चार वर्ष में मैट्रिक परीक्षा पास करा दी जाय। जो छात्र संस्कृत पढ़ना चाहते हों, उन्हें किसी एक उद्योग की शिक्षा के साथ चार वर्ष में ग० संस्कृत कालेज, काशी की मध्यमा-परीक्षा पास करा दी जाय और जो केवल उद्योग-धन्धे में ही रुचि रखते हों, उन्हें अँग्रेजी और संस्कृत की उपयोगी शिक्षा के साथ चार वर्ष में कला-विशारद बना दिया जाय। माध्यमिक विभाग में बम्बई-जैन-परीक्षालय की 'धर्म-विशारद' की शिक्षा सब के लिये अनिवार्य हो। इस प्रकार अठारह वर्ष की उम्र में शिक्षार्थी की शिक्षा समाप्त करके उसे छुट्टी दे दी जाय।

इस शिक्षा के साथ-साथ उनके शरीर और चरित्र के गठन को सुदृढ़ बनाने के लिये खेल-कूद, व्यायाम, आसन आदि की शिक्षा का क्रम भी जारी रहनी चाहिये। लौकिक विषयों का ज्ञान कराने के लिये समय-समय पर भाषणों की व्यवस्था भी रहनी चाहिये तथा छुट्टी के दिनों में प्रकृति-पर्यवेक्षण के लिये भ्रमण करने का भी प्रबन्ध रहना चाहिये।

पपौरा का स्थान बहुत रमणीक है। वहाँ का वातावरण बहुत स्वच्छ है। शहरों के विषाक्त वायुमण्डल के विषैले कीटाणुओं की पहुँच से दूर है। उस स्थान पर बच्चों को छोटी उम्र से रखकर यदि विद्याभ्यास कराया जाय और प्रत्येक उपयोगी विषय का ज्ञान कराकर उन्हें सबल और सक्षम नागरिक बना दिया जाय तो उससे उनका, समाज का, बुन्देलखण्ड प्रान्त का और देश का बड़ा हित हो सकता है। बुन्देलखण्ड प्रान्त के हितेच्छु श्रीमान् ओरछेश की छत्रछाया में उनकी राजधानी टीकमगढ़ से कुछ मील की दूरी पर बसे पपौरा का 'वीर-विद्यालय' वीर-प्रसू बुन्देलभूमि के नाम के अनुरूप प्रत्येक क्षेत्र में वीरों को पैदा करने वाला न बने, यह सम्भव नहीं है। फिर जब बुन्देलखण्ड में नव चेतना के संचार का श्रीगणेश करने वाले राजगुरु श्रद्धेय पं० बनारसीदास जी चतुर्वेदी की उस पर कृपा-दृष्टि है तो उसके दिन फिरने में अब देर नहीं है।

बनारस]

पपौरा-तीर्थ

(कला-कौशल की शिक्षा की आवश्यकता)

श्री वृन्दावनलाल वर्मा

श्री बनारसीदास जी चतुर्वेदी तथा राजकुमार जी शास्त्री की कृपा से हाल ही में पपौरा-क्षेत्र के दर्शन करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। मन्दिरों के भीतर शान्ति बरस रही थी। मूर्तियों के सुडौल और सुन्दर शरीर सौम्य बिखेरने के लिये नेत्रों की मुद्रा से होड़-सी लगा रहे थे। जिसका ध्येय संसार को केवल शान्ति प्रदान करने का हो, उसको कल्याणकारी सौन्दर्य के अतिरिक्त और सब विक्षेप ही जान पड़ेगा।

इस कल्याणकारी सौन्दर्य के प्रचुर रूप में होते हुए भी एक बात की त्रुटि खटकी। वह त्रुटि नवयुग के तकाज़ों के कारण प्रकट हुई जान पड़ती है। इस क्षेत्र का अहाता काफी बड़ा है और मन्दिर बहुत से हैं। मन्दिरों के गर्भगृहों को छोड़कर शायद अन्तराल भाग को भी छोड़कर, बाकी स्थान विद्यार्थियों की कंठध्वनि से गुंजायमान होना जरूरी है और यह कंठध्वनि केवल व्याकरण, न्याय या काव्य का उच्चार न करे, किन्तु रसायन-शास्त्र, गणित इत्यादि को भी सुनावे। अनेक जैन-व्यवसायी तथा व्यापारी काफी साधन-सम्पन्न हैं। वे नये-नये मन्दिर न बनवाकर यदि इस ओर ध्यान देने की कृपा करें तो समाज का बड़ा उपकार होगा। यदि एक व्यवसायी ने एक ही विद्यार्थी को किसी विशेष कला मे पारंगत करा दिया तो मुझको विश्वास है कि उसको एक मन्दिर बनवाने का पुण्य प्राप्त हो जावेगा। आत्मा का कल्याण पेट के कल्याण के साथ जुड़ा हुआ है।

झाँसी]

पपौरा–विद्यालय की व्यापक योजना

श्री यशपाल जैन बी. ए. एल-एल. बी.

पपौरा–विद्यालय की व्यापक योजना देखकर हर्ष हुआ। अतिशयक्षेत्र पपौरा से जैनसमाज भली भाँति परिचित है और जिन महानुभावों को उस तीर्थ के दर्शन करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है, वे जानते हैं कि वह स्थान कितना रमणीक और आकर्षक है। वहाँ की प्राकृतिक सुषमा, पचहत्तर मंदिरों का समुदाय, धर्मभावना के उपयुक्त शांति और एकांत जैन–अजैन सभी को अपनी ओर आकृष्ट करते हैं।

'वीर-विद्यालय' वहाँ पचीस वर्ष से चल रहा है, लेकिन उसका ध्येय अबतक अन्य जैन-शिक्षा-संस्थाओं की भाँति ही रहा है। अब भी वह केवल जैन विद्यार्थियों के लिए ही है। ऐसे पुण्य स्थान पर मानव मानव के बीच भेद करना मानों वहाँ की प्रकृति के प्रति अन्याय करना है। वहाँ के हरे-भरे वृक्षों की छाँह सबके उपभोग की वस्तु है। वहाँ के पुष्पित वृक्षों और लताओं को देखकर आनंदित होने का सबको समान रूप से अधिकार है। तब विद्यालय का द्वार किसी सम्प्रदाय विशेष के लिए ही खुला रहे, यह कुछ अनुचित–सा प्रतीत होता है। जैनेतर विद्यार्थियों के लिए वह क्यों बन्द हो?

हर्ष है कि पपौरा–विद्यालय की संचालक कमेटी ने विद्यालय को अब एक व्यापक रूप देने का विचार किया है। आशा है, 'विद्या-मंदिर' सच्चे अर्थों में सरस्वती की आराधना

का स्थान होगा और वहाँ जैन विद्यार्थियों के साथ जैनेतर विद्यार्थी भी शिक्षा प्राप्त कर सकेंगे।

हमारी अधिकांश शिक्षण संस्थाएँ एकांगी हैं। वे शिक्षा पर तो जोर देती हैं; लेकिन बच्चों को स्वावलम्बन का पाठ नहीं पढ़ातीं। विद्यार्थियों को ऐसे उद्योग-धंधों की शिक्षा नहीं दी जाती, जिन्हें सीखकर वे स्कूल या कालेज छोड़ने के पश्चात् अपने पैरों पर खड़े हो सकें। परिणाम यह होता है कि डिगरी लेने के बाद विद्यार्थी नौकरियों के पीछे भटकते हैं और उनकी समूची प्रतिभा दफ्तरों की मेजों पर कमर झुका कर फायल ठीक करने में ही नष्ट हो जाती है। 'विद्या-मंदिर' के आयोजन में इस अभाव की ओर ध्यान रखकर कुछ छोटे-मोटे उद्योगों (जैसे कागज बनाना, स्याही तैयार करना, साबुनसाजी, कताई आदि) की भी व्यवस्था की गई है। यह चीज अत्यंत आवश्यक ही नहीं, अनिवार्य है। यदि उद्योग-धंधों का समावेश प्रत्येक शिक्षण-संस्था में उसके साधनों के अनुसार कर दिया जाय तो आज जो बेकारी हमारे देश के नवयुवकों को खाये जा रही है, बहुत,कुछ अंशों में दूर हो सकती है। ध्यान रहे कि उद्योग-धंधों का चुनाव आसपास की जनता की आवश्यकताओं को देखकर किया जाय, अन्यथा जो चीजें तैयार होंगी, उनकी बिक्री के प्रबंध में ही काफी समय और शक्ति का व्यय हो जायगा।

अंग्रेजी के एक प्रसिद्ध लेखक ने वर्तमान शिक्षा-प्रणाली और शिक्षालयों के संबन्ध में लिखा है, "क्या हुआ, यदि कालेजों अथवा विश्व-विद्यालयों से एक-दो आदमी बड़े होकर

निकले। अधिकांश विद्यार्थी तो पीले होकर और घुन कर निकलते हैं और संसार में प्रवेश करते समय तक उनका मस्तिष्क एकदम खोखला हो जाता है!" इसका मुख्य कारण यही है कि हमारी वर्तमान शिक्षा-प्रणाली विद्यार्थियों के स्वास्थ्य का समुचित ध्यान नहीं रखती। पाठ्य-पुस्तकों को रटने से अवकाश मिले तभी तो विद्यार्थी खेल-कूद की ओर ध्यान दें! अवकाश मिलता भी है तो पढ़ाई के दबाव के कारण उस ओर उनकी रुचि ही नहीं रहती। 'विद्या-मंदिर' में शारीरिक शिक्षा को भी महत्वपूर्ण स्थान दिया गया है। आशा है, उन्मुक्त वायु, अनंत आकाश और प्रकृति के साहचर्य में विद्यार्थी अपने शरीर को खूब पुष्ट कर सकेंगे।

'विद्या-मंदिर' की योजना में शिक्षा के साथ लगभग उन सभी चीजों का समावेश कर दिया गया है, जो विद्यार्थियों के मानसिक तथा शारीरिक विकास के साथ-ही-साथ उनके चरित्र-निर्माण के लिये जरूरी हैं। आम शिकायत है कि मौजूदा शिक्षालयों में उस सांस्कृतिक वातावरण का सर्वथा अभाव है, जो विद्यार्थियों को सच्चा नागरिक बनाने के लिये आवश्यक है। ढर्रा कुछ ऐसा पड़ गया है कि अधिकारियों का ध्यान ही उस ओर नहीं जाता। उस प्रकार के वातावरण के अभाव में लड़के बहुतसी बुरी बातें सीख जाते हैं। शिक्षा का ध्येय विद्यार्थियों को सच्चा नागरिक बनाना होना चाहिए। ऐसा नहीं तो शिक्षा का अर्थ ही क्या?

जो बात पं० बनारसीदासजी चतुर्वेदी ने 'अहार'-तीर्थक्षेत्र के संबन्ध में लिखी है, वह पपौरा पर भी लागू होती

है। उनका कथन है, "ज्यों-ज्यों भारत की जन-संख्या बढ़ती जायगी—और वह तेजी से बढ़ रही है—रहने के स्थान संकुचित होते जायगे और तब इन विस्तृत तपोवनों का महत्व और भी बढ़ जायगा। सहस्रों संत्रस्त प्राणी यहाँ आकर मानसिक तथा आध्यात्मिक शान्ति प्राप्त करेंगे।" हम क्यों न आज ही से उस दिन की कल्पना करके तैयारी करें ?

'विद्या-मंदिर' की योजना काफी विशद और व्यापक है। इसे कार्यान्वित करने के हेतु पर्याप्त धन की आवश्यकता होगी, लेकिन हमें विश्वास रखना चाहिए कि किसी भी शुभ संकल्प के लिए पैसे की कमी नहीं होती। समाज के धनी-मानी महानुभाव अपना दायित्व भली प्रकार पहचानते हैं।

कुंडेश्वर,
(टीकमगढ़)

औद्योगिक शिक्षा-मन्दिर पपौरा

श्री जगन्मोहनलाल जैन शास्त्री

श्री वीर विद्यालय पपौरा के भावी शिक्षाक्रम के बनाने की एक चर्चा विरोध की जड़ों में से निकल पड़ी है। गन्दले-सड़े पदार्थों की खाद से उत्पन्न होने वाली श्रेष्ठतम धान्य-राशि की तरह यह चर्चा अत्यन्त उपयोगी है। शिक्षा की समस्या आज के लिये केवल पपौरा ही की समस्या नहीं किन्तु सम्पूर्ण समाज की समस्या है। ऐसा होने पर भी हमें यहाँ केवल पपौरा को दृष्टिगत रखते हुए विचार करना है।

पपौरा—बुन्देलखण्ड वीर-भूमि का मध्य केन्द्र है। श्रीमान् ओरछा-नरेश श्रीवीरसिंहजू देव की पवित्र पुण्य छाया में वह स्थित है। भगवान वीरनाथ स्वामी के धर्म-शासन की शीतल छाया व धार्मिक वातावरण से ओत-प्रोत है। एकान्त स्थल है, पुण्य क्षेत्र है, ऐतिहासिक स्थान है, रमणीक है। शिक्षा के लिये, संस्कृति के लिये हर तरह से उपयोगी है। स्वर्गीय ब्र० मोतीलालजी वर्णी ने इस स्थान पर एक शिक्षा संस्था का बीजारोपण किया था, जो आज "पपौरा वीर विद्यालय" के नाम से प्रख्यात हो रहा है।

पपौरा जैसे क्षेत्र के बीच में, जहाँ जैन-समाज की संख्या काफी है, वह क्षेत्र मध्य प्रान्त के परवार, गोलापूर्व, गोलालारे आदि, जैन जातियों के पूर्वजों की मूल निवास भूमि है। जनता प्रायः अशिक्षित पाई जाती है। सैकड़ों मीलों के आस-पास हिन्दी

को साधारण सी शिक्षा प्राप्त करने के लिये प्राइमरी स्कूल नहीं है। ऐसी दशा मे यह आवश्यक है कि पपौरा में प्रारम्भिक शिक्षा-दान करने के लिये पूर्ण और योग्य व्यवस्था रखी जावे। इसकी उपेक्षा कर उच्च शिक्षा की व्यवस्था के लिये दौड़ना बड़ी भारी गलती होगी। समाज के हजारों अशिक्षित बच्चे शाला के अभाव में अशिक्षित हैं—गरीबी से अन्यत्र भेजे नहीं जा सकते। भेजे भी जांय तो कहीं उनको स्थान (छात्रावास में) नहीं मिलता। हर जगह उच्च शिक्षा की कीर्ति-लोलुपता उनके लिये द्वार बन्द किये हैं। अनाथ (मातृ, पितृ, धन-हीन) बालक-बालिकाओं के लिए कोई आश्रय-स्थान नहीं। यह सब ऐसी विकट समस्या है कि जिसके लिए २-४ सौ छात्रों के रहने, खाने-पीने और शिक्षा देने की व्यवस्था बना देने की नितान्त आवश्यकता है। आज बुन्देलखण्ड के सैकड़ों बच्चे अनाथालयों में परवरिश पाते हैं। खण्डवा हिन्दू अनाथालय में आज भी जैन बच्चे और बच्चियाँ मौजूद हैं, इसका मुझे पता है। और भी कहाँ कितने हैं पता लगाने पर इनकी काफी संख्या मिलेगी। हजारों बच्चे आश्रय-विहीन फिरते-फिरते विधर्मी बना लिए जाते हैं। इनकी रक्षा का हमारे पास आज कोई प्रबन्ध नहीं। मध्य प्रान्त में सोनागिरि, पपौरा, बीना, सागर, कटनी, जबलपुर, सिवनी, ललितपुर, अहार या सम्भवतः एक-दो और स्थानों में ऐसी संस्थाएँ हैं, जिनमें छात्रालय है, जहाँ दस-बीस छात्र रह सकते हैं। केवल सागर में ७०-८० छात्रों के योग्य स्थान है। किन्तु इनमें से एक भी स्थान ऐसा नहीं है जहाँ प्राइमरी शिक्षा प्राप्त करने योग्य गरीब छात्रों को रहने की गुञ्जाइश हो। यदि कहीं हो भी तो इतनी अल्प संख्या में, जो नगण्य है। सभी संस्थाएँ प्रायः प्राइमरी के बाद उच्च शिक्षा की व्यवस्था में ही अपना महत्व रखती

हैं। पपौरा इन्हीं सब कारणों से मेरी दृष्टि में प्राइमरी शिक्षा के योग्य अशिक्षित बालकों के रहन-सहन व शिक्षा का एक महान केन्द्र-स्थल होना चाहिए।

इस विभाग में शिक्षा क्रम छः साल का हो, जिसमें सर्वसाधारण समाज के योग्य भाषा, गणित, धर्म, इतिहास, भूगोल, राजभाषा, गृहउद्योग और संस्कृत साहित्य का थोड़ा-सा परिचय आदि विषयों की शिक्षा दी जावे। गृहउद्योग से मेरा तात्पर्य उन चीजों से है जिनकी गृह में नित्य आवश्यकता है, जो पैसा पैदा करने के साधन तो नहीं हैं, पैसा व्यर्थ व्यय से बचाने के पूर्ण साधन हैं। समय की भी इससे बचत होती है। जीवन नियमित और संयमी बनता है। जैसे—साधारण रोगों की औषधियाँ, रोगी की परिचर्या, पथ्य सम्बन्धी ज्ञान, काठ, लोहा, टीन, पत्थर, मिट्टी, तार आदि की साधारण चीजों का बनाना या बिगड़ जाने पर सुधार लेना, चरखा चलाना, कपड़े सींना, जिल्द बाँधना, कृषि, तदुपयोगी खाद आदि का उपयोग, पशु-पालन, ये सब गृह-उद्योग मानना चाहिए।

व्यावहारिक ज्ञान के योग्य ऐसी पुस्तकें तैयार कराई जावें, जिनमे तदुपयोगी विषयों का वर्णन हो। जैसे—रेल, तार, डाक, मालगुजारी, साधारण बही खाता, बैंक आदि के उपयोगी नियमों का ज्ञान।

गृह-उद्योग और व्यावहारिक शिक्षा केवल पुस्तकों के जरिए ही नहीं दी जा सकती, बल्कि समय-समय पर उनको उपयोग उनसे कराया जाय। उक्त शिक्षा सर्वसाधारण के योग्य सिद्ध होगी और इससे बालक योग्य नागरिक बन सकेंगे।

इस विभाग के सुव्यवस्थित होने पर उच्च शिक्षा विभाग की आयोजना की जावे। इस विभाग में वे छात्र आ सकेंगे जिनकी बुद्धि अच्छी है, जिन्हें छः वर्ष की शिक्षा के बाद भी पढ़ने के लिए सुविधाएँ और समय है।

इसके लिए धार्मिक शिक्षण के साथ-साथ आवश्यक राजभाषा व संस्कृत भाषा की शिक्षा दी जावे। व्यावहारिक ज्ञान के योग्य आजकल अनेक पुस्तकें तैयार हो चुकी हैं और हो रही हैं। उनका चुनाव किया जाय और उनका एक उत्तम पाठ्य-क्रम नियत कर दिया जावे। छात्र स्वयं भी उनका अध्ययन अध्यापक की थोड़ी-सी सहायता से कर सकता है। उसकी परीक्षा भी अनिवार्य हो।

औद्योगिक शिक्षा के लिये जो भी साधन उपलब्ध हो सकें उपयोग में लाये जांय। इस मशीन युग में औद्योगिक शिक्षा असम्भव-सी हो गई है। हाथ से तैयार की हुई चीजें मशीन से तैयार की हुई चीजों के सामने न तो देखने में उत्तम प्रमाणित होती हैं और न कीमत देने में। ऐसी दशा में हाथ की चीजें केवल दर्शन की व प्रेम की वस्तु जरूर हैं, पर उनसे अर्थोपार्जन नहीं हो सकता। संभव है कि युग बदले और हाथ की कारीगरी को प्रोत्साहन मिले।

मशीन के द्वारा औद्योगिक शिक्षा बहुद्रव्य साध्य है। इस लिए मैं उसे उस स्थान के योग्य संभावित नहीं पता। हां, कुछ साधारण अर्थोपार्जन के उद्योग हैं—लोहा, काठ, टीन, पीतल, सोना, चांदी, तांबा, सूत आदि के द्वारा साधारण वस्तुएँ या आभूषण या वस्त्र तैयार करना। यदि संभव हो-तो यह शिक्षा अवश्य दी जाय।

उच्चतम शिक्षा प्राप्त करने के लिये छात्रों को विश्व-विद्यालयों में भेजना चाहिए। उनके लिये साधारण स्थानों में प्रबन्ध करना बहु व्ययसाध्य और अति परिश्रम का कार्य है।

हमें यह आशा है कि पपौरा में उक्त प्राथमिक व उच्च शिक्षा-विभाग-दोनों विभाग बड़ी सुन्दरता के साथ चल सकते हैं और वह क्षेत्र इसके लिये बहुत ही उपयुक्त है।

संस्थाओं में एक बात का ध्यान सदा रक्खा जाना आवश्यक है। वह यह कि छात्रों को पुस्तकीय शिक्षा के लिये जिस तरह प्रेरित किया जाता है, उसी तरह सादा और संयमी जीवन बनाने के लिये प्रेरित किया जाय। इसकी उपेक्षा न की जावे। इसके लिये योग्य संरक्षक की व्यवस्था भी अत्यन्त आवश्यक है। संस्थाएँ किसी भी देश या समाज व धर्म की संस्कृति की रक्षा के हेतु बनाई जाती हैं। इसलिये यह सदैव ध्यान रखना होगा कि छात्र जैनत्व और भारतीयता से दूर तो नहीं जा रहे हैं। यदि इस ओर उपेक्षा रही तो आमूल आयोजन व्यर्थ सिद्ध होगा।

हमें आशा ही नहीं, वरन् पूरा विश्वास है कि पपौरा-चर्चा केवल चर्चा ही नहीं रहेगी, किन्तु वीरकेशरी ओरछा-नरेश की छत्र-छाया में अवश्य फले-फूलेगी।

कटनी]

पपौरा का भविष्य

(एक स्वप्न)

डा० रामनगरसिंह

यदि कोई मुझसे पूछे कि आपके जीवन की सबसे बड़ी अभिलाषा क्या है, तो मैं उत्तर दूंगा 'तरुण समाज के चरित्र को सांचे में ढालना।' किसी देश, जाति या राष्ट्र का उत्थान या पतन उसके तरुण समाज पर ही निर्भर है। यही समाज अपने भूल का कलंक मिटा सकता है, दासता की शृङ्खलाएँ तोड़ सकता है। अपनी जननी जन्म-भूमि का मुख उज्ज्वल कर सकता है। संसार के अग्रगामी लोगों में अपनी गणना करा सकता है।

किन्तु खेद है कि हमारा समाज विनाश के पथ पर ही जा रहा है। हम पाश्चात्य देशों की नकल करना सीख रहे हैं, जिसका भयंकर परिणाम आगे चल कर हमें या हमारी सन्तान को उठाना पड़ेगा। आज जो परिणाम पाश्चात्य सभ्यता की बदौलत संसार उठा रहा है, उसका नग्न रूप हम अपनी आँखों देख रहे हैं। फिर उसी की नकल में दत्त-चित्त रहना कहाँ की बुद्धिमत्ता है!

हमारे ऋषियों की दी हुई सभ्यता ही हमारा कल्याण कर सकती है। इसका यह अर्थ नहीं कि हम प्रगतिशील न बनें। इसका यह भी अर्थ नहीं कि हम लंगोटी लगा कर जङ्गल की ओर चले जावें। इसका सीधा-सादा अर्थ यह है कि हम

आश्रम धर्म को न छोड़ें; अपने-अपने कर्तव्य का सब पालन करें, दूसरे के शोषण करने की कामना छोड़ दें। भौतिकता और आध्यात्मिकता का ऐसा उत्तम समन्वय हो कि हमारा यह लोक भी बने और परलोक भी, केवल आध्यात्मवादी जीवन सांसारिक प्रगति को रोक देता है और अकेला भौतिक जीवन मानव को दानव बना देता है।

योरोप का वेदान्त-प्रेमी मोक्समूलर कहता है कि यदि पाश्चात्य देश भारतवर्ष का अध्यात्मवाद आठ आना सील ले और उतना ही भारतवर्ष पाश्चात्य देशों का कर्म-वाद तो संसार बड़ा सुन्दर हो जाय और जो समय-समय पर युद्ध द्वारा नर-संहार हुआ करता है वह सदा के लिए मिट जाय। संसार में शान्ति और अहिंसा उस समय तक स्थापित करना असम्भव है, जब तक भौतिकता और अध्यात्मवाद का पूर्णत: समन्वय न हो। बड़े-बड़े उपदेशक और धर्म संस्थापक आये और फिर भी संसार की दुम कुत्ते की दुम की तरह टेढ़ी बनी हुई है। इसका यही कारण है कि हम लोगों ने शास्त्र और महान् आत्माओं के वचनों पर अब तक ध्यान नहीं दिया। हमारी आसुरी सम्पत्ति बढ़ती ही गई। उसी के फल स्वरूप आज शिव का तीसरा नेत्र खुला हुआ है और नर-संहार असंख्य मात्रा में हो रहा है। यह नर-संहार हमारे ही कर्मों का फल है, जिसको हम भोग रहे हैं और यदि चेते नहीं तो फिर भोगेंगे।

पपौरा-क्षेत्र-सम्बन्धी मेरी कल्पना संक्षेप में यह है—

१. वर्तमान विद्यालय अखिल भारतीय जैन विद्यापीठ हो।

२. छात्रों को मानसिक शिक्षा के अतिरिक्त शारीरिक, व्यायाम और सैनिक शिक्षा दी जावे।

३. आयुर्वेद का पठन अनिवार्य रहे।

४. औद्योगिक शिक्षा के साथ-साथ गो-पालन और कृषि की शिक्षा दी जावे।

५. सात्विक ढङ्ग से व्यापार करने की भी शिक्षा दी जावे।

६. धार्मिक शिक्षा का आधार अपने प्राचीन शास्त्र हों और साम्प्रदायिकता का पुट न देकर सार्व-भौमिक धर्म के सिद्धान्त छात्रों को बतलाये जावे।

७. प्रत्येक छात्र इतना स्वावलम्बी बनाया जावे कि वह नौकरी की परवाह् न करके अपनी जीविका सरलता से उपार्जन कर सके और अपनी कौटुम्बिक सेवा के साथ-साथ देश-सेवा और विश्व-सेवा का लक्ष्य रखता हुआ कार्य करे।

टीकमगढ़, सी० आई०]

आदर्श योजना ।

श्री मूलचन्द किसनदास कापड़िया

वीर मन्दिर की बहुत ही सुन्दर, आदर्श एवं लाभकारी योजना है । इसमें सांस्कृतिक, साहित्यिक, शारीरिक एवं औद्योगिक शिक्षाको स्थान दिया गया है । इसमें भी कुछ सुधार और संशोधन की आवश्यकता है । इसीलिये इसे विद्वानों और श्रीमानों के सामने पेश किया गया है । हमारा अनुरोध है कि अपने-अपने विचार, सुधार और संशोधन कमेटी को भेजने की कृपा करें ।

यदि इस योजना के अनुसार कार्य प्रारम्भ हो सका और कुछ वर्ष इसी के मुताबिक काम चल सका तो वास्तव में यह एक उपयोगी, आदर्श एवं अनुकरणीय संस्था बन जायगी । साहित्याचार्य पं० राजकुमारजी जैन को इस ओर काफी उत्साह और लगन है । यह स्थान भी बहुत सुन्दर और सर्व प्रकार योग्य है । निकट में ही (कुण्डेश्वर में) रहने वाले भारत विख्यात विद्वान पं० बनारसीदासजी चतुर्वेदी तथा बा० यशपालजी जैन बी. ए. एल. एल. बी. का भी सहयोग मिलने की आशा है । यदि जैन समाज इस ओर ध्यान देगा तो अवश्य ही पपौरा विद्यालय की यह सुन्दर योजना कार्य रूप में परिणत हो जायगी और कुछ ही वर्ष में शिक्षा के क्षेत्र में काफी शुभ परिवर्तन हो जायगा । हम इस योजना की सफलता चाहते हैं ।

—सूरत]

सफलता का सूत्र

श्रीनाथूलालजी शास्त्री

श्री वीर दिगम्बर जैन विद्यालय पपौरा की संचालक-कमेटी ने एक विद्या-मन्दिर की नवीन आयोजना निकाली है। इसमें विद्यार्थियों को अच्छे वातावरण में रखकर उनके चरित्र-निर्माण के साथ साहित्य और औद्योगिक शिक्षण द्वारा सफल नागरिक बनाने की व्यावहारिक रूप-रेखा तैयार की गई है। रूपरेखा में सांस्कृतिक, साहित्यिक, शारीरिक और औद्योगिक शिक्षण का विवरण दिया गया है। निःसंदेह यह आयोजन अगर कार्यान्वित हो जाय तो बहुत ही अच्छा हो, परन्तु यह व्यय और परिश्रमसाध्य कार्य है। विभिन्न विभागों के शिक्षणार्थ इसमें कम से कम दस योग्य शिक्षकों और सौ छात्रों की आवश्यकता होगी। यह रूपरेखा अपूर्ण नहीं मालूम होती, क्योंकि हाईस्कूल परीक्षा, प्राकृत और हिन्दी की साहित्यरत्न तक की शिक्षा, क्वींस कालेज बनारस की शास्त्री परीक्षाएँ, सम्पादन-कला, लाठी आदि का शारीरिक शिक्षण, कागज, साबुन, सूत कातने, व्यापार शास्त्र, शार्ट हैन्ड, टाइप राईटिङ्ग आदि का ज्ञान धर्म, न्याय व दर्शनों का तुलनात्मक अध्ययन आदि सब कुछ इसमें सम्मिलित है। मेरे विचार से इसे सफल बनाने में यदि दो-तीन सेवा की भावना रखने वाले उत्साही और निःस्पृह व्यक्ति योग दें अथवा इस कार्य के लिए कोई अनुभवी और प्रभावशाली व्यक्ति अपना जीवन समर्पण करदे तो ऐसी संस्था का अधिक हित होकर यह आयोजन शीघ्र ही अमल में आ जायगा।

—इन्दौर]

शिक्षा सम्बन्धी हमारे अनुभव

(श्री अजितप्रसादजी जैन)

१—शिक्षक संस्था की प्रबन्धकारिणी में कोई उपाधिधारी, धनकुबेर, लक्ष्मीपुत्र न होना चाहिये, जिसका यह भाव हो कि संस्था उसकी नामवरी का जरिया हो। उपाधिधारी लक्ष्मीपुत्रों की पूजा हम कर सकते हैं, अधीनता, गुलामी नहीं।

२—यदि उपाधिधारी सत्ताधारी, धनिकवर्ग को हमारे काम पर, हमारी सच्चाई ईमानदारी, निःस्वार्थ सेवा पर श्रद्धा-विश्वास हो तो रुपया दे, नहीं तो हमें कुछ नहीं चाहिये।

३—सरकारी सहायता द्रव्य भी कदापि न ली जाय। स्वाधीनता में फर्क न आने पावे। सरकारी नियन्त्रण संस्था का अभीष्ट पूरा होने नहीं देता। सरकारी नियन्त्रण उसकी जड़ खोखली कर देता है।

४—सरकारी डिग्री-उपाधि भी घातक रोगवत् है। शिक्षा-संस्था से सरकारी गुलाम बनाने का काम न लिया जाय।

५—धार्मिक, वैज्ञानिक, साहित्यिक, शारीरिक और सदाचार की शिक्षा और अभ्यास एक साथ होना चाहिये।

६—प्रबन्धकारिणी के प्रस्ताव सर्व सम्मति से निर्णीत हों। भिन्न-मत बड़ा विघ्नकारी है।

बस इन्हीं बातों पर ध्यान रखिये ॥ काम कीजिये।

लखनऊ] [विद्वान लेखक के पत्र का अंश

शिक्षा की समस्या

श्रीयुत सवाई सिंघई धन्यकुमार जैन

आज संसार के अनेक महान विद्वान और विचारक भावी जगत् के निर्माण के प्रश्नों पर विचार कर रहे हैं। बड़ी बड़ी योजनाएँ तैयार की जा रही है और करोड़ों अरबों रुपये के व्यय की व्यवस्था की जा रही है। दूरदर्शी राजनीतिज्ञ तथा मानवजाति प्रेमी दार्शनिक इस बात के लिये चिन्तित है कि मानव सभ्यता को किस प्रकार विध्वंशक शक्तियों से बचाया जाय और जिन कारणों से वह पतन की पराकाष्ठा को पहुँच गई है उन्हें किस तरह रोका जाय।

शिक्षा की समस्या ने इस प्रकार विश्वव्यापी रूप धारण कर लिया है। भारतवर्ष में भी सर्जेन्ट स्कीम पर चर्चा चल रही है। ऐसे अवसर पर हमारे विद्यालयों के संचालकों का कर्तव्य है कि वे भी अपनी संस्थाओं के भविष्य के विषय में कुछ विचार करें।

शिक्षा सम्बन्धी जैन संस्थाओं के इतिहास पर तो अलग ही निबन्ध लिखा जाना चाहिये। उसके लिये यहां न अवकाश है न स्थान। इस समय केवल इतना ही कहना पर्याप्त होगा कि आजके सौ वर्ष पूर्व जयपुर में दीवान अमीचन्द जी के मुनीम द्वारा स्थापित एक जैन शिक्षा संस्था थी। उसके बाद खुरजा और बम्बई में पाठशालाओं की नींव पड़ी। तदनन्तर इन संस्थाओं से जो प्रतिभासम्पन्न पण्डितवर्ग निकला, उसने अपने अविश्रान्त परिश्रम और अध्यवसाय से भारतवर्ष के मुख्य-मुख्य

नगरों, उपनगरों तथा ग्रामों में बहुत सी पाठशालाएँ खोलीं, विशाल भवन निर्माण कराये, जटिलतम पठनक्रम रक्खा और उनके कार्य संचालन के लिये स्थायी फण्डों (ध्रौव्य कोषों) की व्यवस्था की। वे शिक्षा संस्थाएँ रूढ़ि परम्परा के लिये आज भी जराजीर्ण अवस्था में चल रही हैं। खेद की बात है कि उनके सम्पर्क में ऐसे शिक्षा विशेषज्ञ नहीं रहे और न वर्तमान में है, जो समय की गतिविधि के साथ साथ देश धर्म तथा समाज के अनुकूल समयोपयोगी नूतन साहित्य का सृजन कर सर्वसाधारण तक उसे पहुँचाते, या शिक्षा क्रम के साधनों, नियमों, उपनियमों व पठनक्रमों में आवश्यकतानुसार परिवर्तन कर हमारी भावी सन्तति को सात्विक मानसिक भोजन उचित मात्रा में प्रदान करते।

वर्तमान प्रारम्भिक पाठशालाओं, स्कूलों और कालेजों विदेशी भाषा तथा सभ्यता की स्पष्ट छाया हमें दिखाई पड़ती है। उस कार्य शैली में हमें भारतीय संस्कृति के दर्शन नहीं मिलते। जो पाठ्य पुस्तकें प्रारम्भ से लेकर अन्त तक विद्यार्थियों को पढ़ाई जाती हैं, उनमें न जीवन है, न आनन्द है, न नवीनता है और न हिलने डुलने तक की तिल भर गुञ्जाइश है! अनुपयोगी विषय बालकों को भारस्वरूप पढ़ने पड़ते हैं। इससे उनमें मानसिक बल, चित्त की विशालता, चरित्र की दृढ़ता नहीं आ सकती। वे अपनी आत्मा व शरीर के स्वास्थ्य की कैसे रक्षा कर सकते हैं। क्या वे बड़े होने पर स्वाभाविक तेज से, गौरव से, प्रतिभा से अपना मस्तक ऊँचा कर सकते हैं? वे केवल इस नीरस शिक्षा-शैली से दूसरों की नकल करना, रटकर विषय तैयार करना और गुलामी करना ही सीखेंगे। उनके सम्मुख

मानव जीवन का कोई उच्च आदर्श नहीं होगा। यह है हमारी शिक्षा पद्धति का वास्तविक रूप।

आमूल परिवर्तन की आवश्यकता—

आज पठन व्यवस्था में आमूल परिवर्तन करने की आवश्यकता है। हमें अपना धर्म अपने में सीमित न रख कर सुरुचिपूर्ण सरल सुबोध भाषा में मिशनरी भावना से प्रत्येक प्राणीमात्र तक ट्रैक्टों और प्रभावोत्पादक व्याख्यानमालाओं के रूप में पहुँचाना चाहिये। विद्यार्थियों के लिये अनेक सुन्दर आयोजनों एवं उपयोगी पुस्तकों द्वारा विश्वधर्म में प्रवेश पाने के लिये प्रेरणात्मक साहित्य पैदा करना चाहिये। इसके अतिरिक्त हमें उस सरल सरस पाठ्य पुस्तकों की आवश्यकता है जिनमें आदर्श गृह और समाज के उज्वल रूप दिखाई दें। हमारे शिक्षण साहित्य में आकर्षण पैदा करने योग्य सामग्री हो, जीवन को कलामय बनाने के साधन हों और शरीर को बलिष्ठ बनाने योग्य वायुमण्डल हो। इसके लिये हमें स्वच्छ आकाश, निर्मल प्रभात, सुन्दर सान्ध्यकाल, शस्य श्यामला वसुन्धरा तथा प्रकृति के सुरम्य वन्य शैल प्रान्तों के निकट रहने का, उनके निरखने का, व्यायाम के प्राकृतिक साधनों को जुटाने का, उनसे अनुभव संचय करने का अवसर मिलना चाहिये, वर्तमान प्रगतिशील वैज्ञानिक युग में प्रवेश पाने योग्य वातावरण पैदा करने के लिये उनमें गति प्राप्त करके साधनों का प्रबन्ध होना चाहिये। किन्तु इन सब बातों के मूल में यह ध्यान अवश्य रहे कि पुस्तकें बालकों की आयु और उनकी योग्यता को ध्यान में रख कर लिखी जांय, विषय अवस्था के अनुसार न्यूनाधिक होते रहें,

जिससे पाठ्यक्रम की पुस्तकों को अधिकता बच्चों के लिये भारस्वरूप न होने पावे और वे बिना विशेष श्रम के विद्यार्थी जीवन का पूर्ण लाभ उठा सकें।

ध्रौव्य कोष, भीमकाय भवन, समितियां और शिक्षक वर्ग—

हमारी शिक्षा संस्थाओं का सम्बन्ध सदैव उन व्यक्तियों या व्यवस्था-समितियों से होता है जो आर्थिक भार से लदी होती हैं। इन समितियों के कार्यकर्ता व्यापारीवर्ग के होते हैं। इससे स्वाभावतः वणिक वृत्ति का समावेश इन जीवन निर्माण करने वाले केन्द्रस्थलों में हो जाता है। फलतः स्थायी फंड की अधिकांश सम्पत्ति का उपयोग भीमकाय विशाल भवनों के बनाने में होता है या व्यक्ति विशेष से उससे स्मारक स्वरूप इसकी पूर्ति कराई जाती है। इस प्रकार शिक्षा जैसा महत्वपूर्ण प्रश्न गौण बना दिया जाता है और दाता को शिक्षा के विषय में उत्साहित करने के बजाय अनुपयोगी बड़ी बड़ी इमारतों के बनाने के लिये प्रेरित किया जाता है, जिससे न शिक्षा का ही हित होता है और न विद्यार्थियों का ही कोई कल्याण। द्रव्य के अपव्यय के कारण फल भोगना पड़ता है हमारे राष्ट्र और समाज के भावी निर्माता बालकों को। जहां तक योग्य अध्यापकों को रखने और उन्हें उचित वेतन देने का प्रश्न आता है, उस दिशा में प्रबन्ध समितियां बिलकुल उदासीन रहती हैं और अधिकांश द्रव्य का विशाल भवनों में व्यय कर बचेखुचे अल्प द्रव्य के कारण बजट में उतना पैसा न होने की अकाट्य दलीलें पेश करके कम से कम वेतन में शिक्षक रख कर अपने कार्यक्रम को पूरा करती हैं? बालकों को शिक्षा विशेषज्ञों के अभाव में जैसी उपयोगी शिक्षा मिलनी चाहिये, वह अंशतः भी नहीं मिल पाती। उन्हें मशीन

की तरह कोर्स का पाठ तैयार करना पड़ता है। जिससे उनका मानसिक विकास नहीं हो पाता और उनकी बुद्धि कूपमन्डूक की तरह सीमित और संकुचित हो जाती है।

हम क्या करें—

हमें विशाल भवनों में अधिक द्रव्य न लगा कर शहरों के विशाल वातावरण और विक्षुब्ध कोलाहल से दूर इन शिक्षा संस्थाओं का शिलारोपण करना चाहिये। ऋतुओं के प्रकोप से बचने के लिये छोटी छोटी कुटियां तैयार कराई जा सकती हैं। पुष्पोद्यान वाटिकाओं और वृक्षों द्वारा उन्हें सुन्दर आकर्षक बनाया जाय। यहां इन छोटे छोटे छायादार स्थानों में जीवनोपयोगी शिक्षा दी जा सकती है। इसमें द्रव्य का बहुत सा भाग बच जायगा, जिसे हम अपने जीवन निर्माताओं भाग्य विधायकों और शिक्षकों के चुनाव में खर्च कर सकते हैं। प्रबन्ध समितियों के जिम्मे संस्था सम्बन्धी सम्पूर्ण कार्यों का अर्थ व्यवस्था का ही भार रहना चाहिये। शिक्षा व्यवस्था का कार्य इस समिति के हाथ में नहीं रहना चाहिये। इसके लिये स्वतन्त्र शिक्षा विशेषज्ञों की एक कमेटी या बोर्ड बनाना चाहिये। यह कमेटी अपने मार्ग प्रदर्शन द्वारा विद्यार्थियों को धार्मिक लौकिक व्यावसायिक, व्यावहारिक और उत्तम नागरिक बनाने में पूर्ण योग दें, यह विद्यार्थियों को अपने पैरों पर खड़े होने लायक बनावे, समय समय पर समयानुकूल योजनाओं द्वारा पथ निर्देश करे। विद्वानों से सम्पर्क स्थापित कराने में सहायता दे। अन्य देशीय उपयोगी विचारधारा को अपनाने, प्रगति की ओर प्रयाण करने, पुनीत प्रेरणाओं और भावनाओं को उनके उर्वर मस्तिष्क में भरने का प्रयत्न करे।

अध्यापकों का चुनाव उक्त कमेटी द्वारा ही बहुत सावधानी के साथ होना चाहिये। जहां शिक्षक में उत्तम स्वास्थ्य, सदाचार तथा क्रियात्मक कल्पनाशक्ति आवश्यक है उसे मनोविज्ञान तथा समाज शास्त्र से भी परिचित होना जरूरी है। कारण कि वह इन गुणों के बल पर ही अपने मनोवैज्ञानिक विश्लेषण द्वारा विद्यार्थी की प्रतिभा और झुकाव को निरख सकेगा और उसकी योग्यता को ध्यान में रख कर मानसिक भोजन दे सकेगा। ऐसे शिक्षक ही हमारी संस्थाओं को नैतिक बल, जीवन तथा स्थायित्व प्रदान कर सकेंगे। संक्षेप में उत्तम पाठ्यक्रम, कार्यव्यवस्था, शिक्षाकमेटी, बालमन्दिर शिक्षालय और शिक्षक। इनके सामंजस्य बिना शिक्षा योजना को आयोजित नहीं किया जा सकता।

इन सब कार्यों का बीजारोपण कब और कैसे हो? इसके लिये सुविधाजनक यह होगा कि एक बार हम वर्तमान शिक्षा-संस्था के कार्यकर्ताओं और निर्माताओं को एक स्थान पर एकत्र करें तथा विचार विनिमय और भाव परिवर्तन के साथ साथ ऐसी नीति को ग्रहण करें कि भिन्न भिन्न संस्थाओं को शिक्षाक्रम के अनुसार भिन्न भिन्न रूपों में परिणित किया जाय और एक सर्वदेशीय समिति द्वारा एक सूत्र से शिक्षा नीति का व संस्थाओं का संचालन हो। इस मार्गनिर्देश से हम अपने विद्यार्थियों को काफी ऊंची शिक्षा दे सकने में समर्थ होंगे। शक्ति का अपव्यय रुक जायगा और संगठित रूप में तथा भविष्य में महान् से महान् कार्य के लिये हम अपने को उन्नत तथा सामर्थ्ययुक्त पा सकेंगे।

रही शिक्षा योजना का सवाल, इसे कैसे तैयार करें, इसके

लिये शिक्षा संस्थाओं तथा स्वतन्त्र शिक्षा विशेषज्ञों में से कुछ योग्य सदस्यों का चुनाव कर एक "शिक्षायोजनानिर्मात्री प्रबन्ध समिति" बनाई जाय जो भारतवर्ष के सब भागों का दौरा कर वहां की उन्नतिशील संस्थाओं का निरीक्षण करे। वहां पठन व्यवस्था तथा उनके साधनों का अवलोकन करे। वहां के संचालकों से विचारविमर्श कर अपने स्वतन्त्र विचार लिपिबद्ध करें। यदि मैं सब लोगों के व्यक्तिगत अनुभव रिपोर्ट के रूप में